प्रवचन

परमहंस श्री हंसानंदजी सरस्वती दण्डीस्वामी जी

विषय तालिका

CD # 58 * MAR – APR 2013 *

SN	Title	Min	Coding			Contents	
1	01 Mar + Apr	31	⊕	⊕	⊕	भगवान राम और सीता जगत के माता-पिता हैं। जो माता-पिता का स्वरूप होता है वही उनकी संतान का भी होता है। यह नियम मनुष्यों में ही नहीं अपितु पशु-पक्षी वृक्ष-पर्वतादि सारी सृष्टि में देखने को मिलता है। सारा संसार सीताराम की संतान है अतः वह सीताराम से अलग नहीं हो सकता यानि संपूर्ण जगत सीताराम का ही स्वरूप है। राम + अयन = रामायन, रामायण राम का घर है जहाँ राम का दर्शन होगा। यदि रामायण में प्रवेश करके भी राम के दर्शन नहीं किये तो केवल श्रम ही हुआ आना-जाना व जिसने राम के दर्शन कर लिये वह जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो गया . . **माता सीता का स्वरूप ::** जगत की उत्पत्ति-पालन-संहार सीताजी करती हैं, भगवान राम को अत्यंत प्रिय सीताजी सब क्लेषों का हरण व सर्वकल्याण करने वाली हैं . . **पिता राम का स्वरूप ::** जीवों के प्रेरक राम चेतन हैं, राम का स्वरूप उदय-अस्त रहित दिनेश सच्चिदानंद है जहाँ मोह-अज्ञान रूपी रात्रि कभी नहीं आती। जिसकी माया के वश में ब्रह्मादि देव औा असुर हैं, जिसकी सत्ता-स्फूर्ति से झूठा संसार भी सत्य जैसा लगता है, संसार सागर से पार होने के लिये जिनके चरण नौका हैं, राम जिनका नाम है वे साक्षात् ईश्वर जन्म-मरण के दुःख का हरण करने वाले है। राम सच्चिदानंद ब्रह्म हैं व सीता महामाया शक्ति हैं . . **जीव का स्वरूप ::** ईश्वर का अंश जीव भी चेतन ज्ञान स्वरूप निर्मल अविनाशी सुखराशि है, जो राम हैं वही तू है, राम और तुझमें भेद नहीं है जैसे जल और लहर में,। जल एक है और लहर अनेक हैं किन्तु वे जल से भिन्न नहीं है अतः हमारा तुम्हारा स्वरूप सच्चिदानंद राम है। जीव का जन्म नहीं होता व हमारे शरीरों का जन्म सीताजी करती हैं। जीव राम के अंश होने से रामरूप व शरीर सीता के अंश होने से सीतारूप होगा अतः हम सीताराम से अभिन्न हैं। ये रामायण का सार है - रामायण पढ़ने-सुनने का यही अर्थ निकला ।	2
2	02 Mar + Apr	30	⊕	⊕		**सीताजी द्वारा भगवान राम का निनि० स्वरूप निरूपण :-** राम प्रकृति से परे एवं सत्-चित्-आनंद से पूर्ण पुरुष हैं तथा सबसे वृहद् हैं अतः ब्रह्म हैं। राम सत्-चित्-आनंद स्वरूप उदय-अस्त रहित ज्ञान के सूर्य हैं एवं आदि-अन्त रहित आनंद के सिन्धु हैं। राम एक अद्वितीय हैं तथा मायाकृत सम्पूर्ण नामरूप उपाधियों से विनिर्मुक्त हैं। ब्रह्म/राम सभी उपाधियों में व्यापक हैं तथा सबकी आखों से राम ही देख रहे हैं किन्तु राम सबसे असंग ही रहते हैं। राम उपाधियों के भीतर भी हैं और बाहर भी परिपूर्ण एवं अखंड हैं। राम ही द्रष्टा-साक्षी हैं, दिखाई पड़ने वाले शरीर माया से बने हैं, राम सत्तामात्र एवं इन्द्रियातीत हैं। इन्द्रियाँ निनि० राम को नहीं देख सकतीं पर राम इन्द्रियों एवं विषयों को देखते हैं। राम निर्मल निर्विकार सर्वव्यापी स्वप्रकाश अकल्मिष सर्वात्मा हैं।	3
3	03 Mar + Apr	33	⊕	⊕		**सीताजी द्वारा भगवान राम का निनि० स्वरूप निरूपण :-** राम सर्वव्यापिन सर्वआत्मा हैं। सारा संसार माया का स्वरूप है। जीवात्मा के रूप में राम ही सब शरीरों में बैठकर देख रहे हैं। राम का और जीव का निनि० स्वरूप एक ही है, दोनों अभेद हैं। जो 'सच्चिदानंद' ब्रह्म का स्वरूप है वही जीव का भी स्वरूप है . . **सीताजी का स्वरूप निरूपण :-** हे हनुमान तुम मुझे मूल प्रकृति जानो। जगत की उत्पत्ति-पालन-संहार मैं करती हूँ राम तो द्रष्टा-साक्षी सत्ता मात्र हैं। सभी जीवों के शरीर और राम-कृष्ण आदि अवतारों के ससा० रूप भी मेरी ही रचना हैं। जीव और ईश्वर का निनि० स्वरूप राम ही है परन्तु मेरा और राम का कभी सम्बन्ध नहीं होता। ये जगत चल है, दे०इ०म०बु०प्रा० एक क्षण के लिये भी रुकते नहीं हैं तथा जीवात्मा अचल और सनातन है जिसका जन्म-मरण नहीं होता, वह मेरा ही स्वरूप है। सब जीवों के अन्तरात्मा के रूप में मैं ही विराजमान हूँ, ये देह देवालय हैं इनके भीतर बैठकर देखने वाला जीव मैं देव 'सच्चिदानंद शिव' ही हूँ। मन्दिर दिखाई देता है और इनमें बैठकर देखने वाला देव है जो दिखाई नहीं देता वह सच्चिदानंद ब्रह्म ही है। मैं शरीरों की माता हूँ जीवात्मा की नहीं, जीवात्मा का जन्म नहीं होता। ईश्वर अंश जीव भी अविनाशी है ज्ञान स्वरूप है। दीखने वाले शरीर सीता तथा देखने वाले राम हैं अतः सीताराम के अतिरिक्त तीसरा कुछ नहीं है।	4
4	04 Mar + Apr	26	⊕			भगवत् तत्त्व को जानने के लिये **४ कृपायें** बतायी है :: १ **ईश्वर कृपा** - नर शरीर २ आत्म कृपा ३ वेद कृपा ४ गुरु कृपा	a
5	05 Mar + Apr	29	⊕	⊕		अध्यात्म रामायण-प्रथम सर्ग-राम हृदय : : **सीताजी द्वारा भगवान राम का निनि० स्वरूप निरूपण :-** 'रामं विद्धि परम् ब्रह्म...' हे हनुमान राम का निनि० स्वरूप सच्चिदानंद ब्रह्म है। सत् की कभी उत्पत्ति नहीं होती इसलिये उसका कभी नाश नहीं होता। राम अनंत अखंड आदि-अंत रहित ज्ञान के सूर्य और आनंद के सिन्धु हैं। हे हनुमान जीवात्मा का भी निनि० स्वरूप सच्चि० ब्रह्म है क्योंकि राम ही सब शरीरों के भीतर बैठकर देख रहे हैं। स्त्री-पुरुष देवता-दैत्य पशु-पक्षी आदि सभी शरीरों के भीतर बैठकर देखने वाला जीवात्मा ब्रह्म अथवा राम ही है। ये जो 'मैं' नाम का तत्त्व है ये राम ही है। ये तत्त्व एक है और शरीर अनेक हैं। शरीरों के भीतर और बाहर राम ही है। भीतर वह जीवात्मा और बाहर परमात्मा कहलाता है जैसे घटाकाश और महाकाश अखंड आकाश की भाँति - 'अहं आत्मा ब्रह्म, सो अयं आत्मा' : : **सीताजी का स्वरूप निरूपण :-** ईश्वर और जीव का सगुण-साकार रूप मेरा स्वरूप है। मैं मूल प्रकृति हूँ, जगत की उत्पत्ति-पालन-संहार का काम मैं करती हूँ। जगत नाम शरीरों का है - ईश्वर और जीव दोनों के, इन सबके भीतर बैठकर देखने वाला तो राम ही है पर इन शरीरों को मैं बनाती हूँ। मैं राम की इच्छा शक्ति हूँ मुझे ही प्रकृति-माया कहते हैं। परा, त्रिगुणात्मिका, अव्यक्त और अविद्या भी मेरे ही नाम हैं। सारे संसार की रचना मैं क्षणमात्र में कर देती हूँ। राम तो केवल मेरे द्वारा जगत की उ०-पा०-सं० को देखते ही हैं। द्रष्टा-साक्षी ब्रह्म का स्वरूप है दृश्य माया है। जीवात्मा और ब्रह्म अभेद है, जीव राम का अंश है अतः रामरूप ही है तथा शरीर सीता का रूप है - ये रामायण का सार है।	5
6	06 Mar + Apr	30	⊕	⊕		अध्यात्म रामायण-प्रथम सर्ग-राम हृदय : : **सीताजी द्वारा भगवान राम का निनि० स्वरूप निरूपण :-** 'रामं विद्धि परम् ब्रह्म...' हे हनुमान राम का निनि० स्वरूप सच्चिदानंद ब्रह्म है। राम **सत्** हैं क्योंकि उनका जन्म-मरण नहीं होता, **चिद्** हैं क्योंकि अनंत-अखंड ज्ञान के सूर्य एवं **आनंद** हैं क्योंकि आदि-अंत रहित आनंद के सिन्धु हैं। वे आकाश के समान व्यापक हैं। जीवात्मा के रूप में राम ही हैं जो सब जीवों के अन्दर बैठकर देख रहे हैं। शरीर के अन्दर वे ही जीवात्मा हैं और शरीर के बाहर परमात्मा हैं - जैसे घटाकाश और महाकाश। जैसे आकाश कभी खण्ड-खण्ड नहीं होता वैसे ही राम सर्वव्यापी अनंत-अखण्ड सच्चिदानंद स्वरूप परम्ब्रह्म परमात्मा हैं : : **सीताजी का स्वरूप निरूपण :-** मुझे तुम मूल प्रकृति जानो, मैं ही जगत की उत्पत्ति-पालन-संहार करती हूँ। शरीरों का सामूहिक नाम ही संसार हैं। मुझे ही प्रकृति, माया और सीता कहते हैं। राम में कोई कर्म नहीं हैं वह तो द्रष्टा-साक्षी मात्र हैं। कर्म तो देह इ०म०बु०प्राण में होते हैं, राम इन सभी से परे हैं। जीव और ईश्वर दोनों के शरीर मैं ही बनाती हूँ। मैं जीवात्मा की जननी नहीं हूँ। जीवात्मा और परमात्मा का जन्म नहीं होता, राम नि०नि० और अजन्में हैं।	6
7	07 Mar + Apr	33	⊕	⊕	⊕	सृष्टि के आदि में सर्वप्रथम ओंकार का प्रादुर्भाव हुआ। प्रकट होने से पहले वह परमब्रह्म ही था तब उसका नाम 'परा', मन में आने पर 'पश्यन्ति', कंठ में आने पर 'मध्यमा' और फिर मुख में आने पर 'बैखरी' पड़ा और ओंकार एक होकर अनेक स्वर-व्यंजन के रूप में बिखर गया। इन स्वर-व्यंजनों से ही सब नामपद और क्रियापद बनते हैं जिनसे सब व्यवहार चलता है। पाणिनीजी ने १४ सूत्रों में सारे स्वर-व्यंजन गूँथ दिये है (See Q&N III] Pg 5) ओंकार भगवान का सर्वश्रेष्ठ नाम है और ओंकार ही वेदों का मूल है। ओंकार ने ही संपूर्ण विश्व का रूप धारण किया है। सारे संसार के नाम ओंकार ने ही धारण किये हैं, ये नाम ही रूप को बताते हैं। नाम बिना रूप की पहचान नहीं होती है। ओंकार के ३ रूप है - अकार, उकार, मकार। इन तीनों को मिलाने से ओंकार बन जाता है। ये भगवान का सबसे छोटा और सर्वश्रेष्ठ नाम है जो भगवान के निनि० और ससा० दोनों स्वरूपों को बतलाता ह अतः ये चतुर दुभाषिया है। ये बीज रूप है यानि सभी नामों का बीज है जिससे सभी नाम-रूप संसार उत्पन्न हुआ है। फिर ओंकार ने	

						निम्न रूप धारण किया :- १ तीन मात्राऐं - अकार, उकार, मकार २ तीनगुण - सत्व, रज, तम ३ तीन देवता - ब्रह्मा, विष्णु, महेष ४ तीन शरीर - स्थूल, सूक्ष्म, कारण ५ तीन भोक्ता - विश्व, तैजस, प्राज्ञ ६ तीन अवस्थाऐं - जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति तथा सभी त्रिपुटियाँ ७ पंच कोष - अन्नमय, मनोमय, विज्ञानमय, प्राणमय, आनंदमय । ओंकार को प्रणव, प्रकृति और महामाया भी कहते हैं। ओंकार माया मात्र है। सुषुप्ति कारण और जागृत स्वप्न कार्यमाया है। जिससे ये प्रकट हुआ है वह मात्रा रहित ब्रह्म है। यह ओंकार ब्रह्म को बताता है। मुझ स्वर- व्यंजन रूप अक्षरों को ज्ञान नहीं हैं किन्तु जिसको मैं नहीं जानता, जिससे मैं प्रकट हुआ हूँ और जो मुझे जानता है वह ब्रह्म है। हे जीव ! वही तेरा रूप है। वह अमात्र ब्रह्म है, वह द्रष्टा है, मैं दृश्य हूँ। जो जीव ऐसा जानता है कि वह ब्रह्म मैं हूँ वह सर्वथा मुक्त है। मुझ ओंकार का बस इतना ही प्रयोजन है। ब्रह्म को बताकर मैं ब्रह्म में ही लीन हो जाता हूँ।	
8	08 Mar + Apr	26				भगवत् तत्व को जानने के लिये **४ कृपायें** बतायी है :: १ **ईश्वर कृपा** - नर शरीर २ आत्म कृपा ३ वेद कृपा ४ गुरु कृपा :: साधन करके गुरु की शरण में जाकरके भगवत् स्वरूप को जान लेना चाहिये। भवसागर को पार करने के लिये जीव को मनुष्य शरीर की प्राप्ति एक नौका के समान साधन है। इस मनुष्य शरीर रूपी नौका के कर्णधार गुरु होते हैं। देव-दुर्लभ मनुष्य प्राप्त होने पर भी जो अपने स्वरूप का ज्ञान नहीं कर लेता है वह मानो आत्महत्या ही करता है। वेद की कृपा गुरुकृपा से ही होगी और गुरु की कृपा आत्मकृपा पर निर्भर है। विवेक, वैराग्य एवं षट्क सम्पत्ति के साथ गुरु की शरण में जाने पर गुरु की कृपा अवश्य प्राप्त होती है। मनुष्य देह को पाना, मोक्ष की इच्छा होना, मोक्ष का स्वरूप बताने वाले गुरु/संतों का मिलना अत्यन्त दुर्लभ है, भगवान के अनुग्रह से ही ये वस्तुऐं मिलती हैं :: **सीताजी द्वारा भगवान राम का निनि० स्वरूप निरूपण :-** 'रामं विद्धि परम् ब्रह्म...'	b
9	09 Mar + Apr	19				**कृष्णयजुर्वेद की मुक्तिकोपनिषद** - भगवान राम से हनुमानजी की प्रार्थना - 'तद्रूपं ज्ञातु मिच्छामि तत्त्वतः राम मुक्तये...' इस पर भगवान राम ने कहा :: मेरा निनि० स्वरूप वेदान्त में सम्यक प्रकार से स्थित है अतः तुम वेदान्त की शरण लो। वेदान्त सभी वेदों में व्यापक है जैसे तिलों में तेल व दूध में घृत । **वेद ४ प्रकार के हैं** :- १०६ शाखा वाला यजुर्वेद, २१ शाखा वाला ऋग्वेद, १००० शाखा वाला सामवेद और ५० शाखा वाला अथर्ववेद । प्रत्येक शाखा की एक-२ उपनिषद है इस प्रकार कुल ११८० उप- निषद हैं, इनमें से १०८ उप० मुख्य हैं, उनमें से ३२ श्रेष्ठ हैं और उनमें से भी १० श्रेष्ठतम् हैं। इन दस में से भी माण्डूक्य उप० केवल **१२ मंत्रों** वाली सबसे छोटी और सर्वोत्तम है । मोक्ष की इच्छा रखने वाले के लिये एक माण्डूक्य उप० ही पर्याप्त है, इसके द्वारा जीव - ईश्वर - माया - ब्रह्म तथा निजस्वरूप का सम्यक बोध हो जाता है।	
10	10 Mar + Apr	36				:: **सीताजी द्वारा भगवान राम का निनि० स्वरूप निरूपण :-** राम प्रकृति से परे एवं सत्-चित्-आनंद से पूर्ण पुरुष हैं तथा सबसे वृहद् हैं अतः ब्रह्म हैं। राम सत्-चित्-आनंद स्वरूप उदय-अस्त रहित ज्ञान के सूर्य हैं एवं आदि-अन्त रहित आनंद के सिन्धु हैं। राम एक अद्वितीय हैं तथा मायाकृत सम्पूर्ण नामरूप उपाधियों से विनिर्मुक्त हैं। राम ही सब जीवों की आत्मा हैं इसलिये जीव और राम के निनि० स्वरूप में कोई भेद नहीं है। हे हनुमान! अब प्रसंग से मेरा स्वरूप भी तुम सुन लो :: **सीताजी का स्वरूप निरूपण :-** मुझे तुम मूल प्रकृति जानो, मैं ही जगत की उत्पत्ति-पालन-संहार करती हूँ। शरीरों का सामूहिक नाम ही संसार हैं। मुझे ही प्रकृति, माया और सीता कहते हैं। राम में कोई कर्म नहीं हैं वह तो द्रष्टा-साक्षी मात्र हैं, कर्म तो देह इ०म०बु०प्राण में होते हैं, राम इन सभी से परे हैं, वह मेरे द्वारा जगत के उत्पत्ति-पालन-संहार को देखते ही हैं, अज्ञान और दुःख ही लीला सब मेरी ही है। जीवात्मा और राम तो एक ही हैं। जीव और ईश्वर दोनों के शरीर मैं ही बनाती हूँ। मैं जीवात्मा की जननी नहीं हूँ। जीवात्मा और परमात्मा का जन्म नहीं होता, राम नि०नि० और अजन्में हैं अद्भुत रामायण - सविस्तार	
11	11 Mar + Apr	32		माण्डूक्य उपनिषद भाग १		अथर्ववेद-मा०उ० :: **भगवान राम द्वारा हनुमानजी को उपदेश** ::: ११८० उपनिषदों में सर्वश्रेष्ठ माण्डूक्य उपनिषद सबसे छोटी, सरल तथा सभी वेद-शास्त्र-उपनिषदों का सार है। हे हनुमान ! ११८० उपनिषदों में सर्वश्रेष्ठ माण्डूक्य उपनिषद् सबसे छोटी, सरल तथा सभी वेद-शास्त्र-उपनिषदों का सार है। ओंकार से उपनिषद् का प्रारम्भ होता है .. **'ओ३म्'** - ये एक अक्षर का भगवान का नाम है, सारा संसार ओंकार का ही विस्तार है। जा०-स्व०-सु०, अकार-उकार-मकार का ही ये जगत विस्तार है। भूत-भविष्य-वर्तमान सब ओंकार ही है तथा जो भूत- भविष्य-वर्तमान से अतीत है, परे है वह भी ओंकार ही है .. निश्चय ही ये जगत सब ब्रह्म का ही स्वरूप है। हमारा-तुम्हारा आत्मा ब्रह्म है, वह जो सच्चिदानंद ब्रह्म है वह हमारी-तुम्हारी जीवात्मा है - इससे ब्रह्म और आत्मा का एकत्व बताया है। ब्रह्म अथवा इस हमारी-तुम्हारी आत्मा के ४ चरण, पाद या रूप हैं (वस्तुतः ब्रह्म एक अद्वितीय है इसमें नानात्व कुछ नहीं है किन्तु माया से इसके ४ रूप हो जाते हैं) प्रथम द्वितीय तृतीय चरण - Q & N iii pg 25 देखें	
12	12 Mar + Apr	30				सृष्टि के आदि में सर्वप्रथम भगवान विष्णु ने ब्रह्मा को उत्पन्न किया और उन्हें शोक-मोह से युक्त देखकर वेद का उपदेश दिया :- हे ब्रह्मन ! मेरे परम् गोपनीय ज्ञान को तुम विज्ञान सहित ग्रहण करो, इस गुह्यतम् ज्ञान व उसके अंग मैं तुम्हें कहता हूँ। मेरा जितना स्वरूप है व जैसे मैं उत्पन्न होता हूँ, जो मेरा रूप गुण एवं कर्म हैं, मेरे अनुग्रह से वैसा का वैसा तुम्हारी बुद्धि में स्थित हो जाये। हे ब्रह्मन ! सृष्टि के आदि में केवल अकेला मैं ही था अन्य कोई नहीं था। **न सत्** या जागृत था, **न असत्** या स्वप्न था और **न इन दोनों से परे** यानि सुषुप्ति ही था अर्थात् जा०-स्व०-सु० तीनों नहीं थे, सुषुप्ति के बाद भी मैं ही रहता हूँ उसे तुरीय या ४था कहते हैं। जो कुछ तुम देख रहे हो वह भी मैं ही हूँ तथा इस सबके नष्ट होजाने पर जो शेष बचेगा वह भी मैं ही हूँ। जो सृष्टि के रूप में प्रकट है वह मैं ही हूँ। मेरे बिना जो कुछ ये संसार प्रतीत हो रहा है और मेरी प्रतीति नहीं हो रही है जब कि मैं इसमें समाया हुआ हूँ तो वो तो तुम मेरी माया ही जानो, मेरी माया ने मुझे आवृत कर रखा है। अज्ञानी लोग मुझे नहीं जानते। वास्तव में मैं अजन्मा हूँ। मेरे भक्तों को मेरे अनुग्रह से माया दूर हो जाने पर मेरे वास्तविक स्वरूप का ज्ञान होने लगता है। मैं सूर्य के समान प्रकाशमान हूँ किन्तु मायारूपी मेघ ने मुझे ढक रखा है, मेरे भक्तों को इन मेघों के हटने पर मेरा यथार्थ दर्शन होने लगता है। मेरी माया से पंचभूत व उनसे सारी सृष्टि उत्पन्न हो जाती है। पंचभूत सबके कारण हैं, कारण अपने कार्य में व्यापक रहता है। इसी प्रकार मैं चराचर जगत में सर्वत्र प्रविष्ट भी हूँ और क्योंकि मुझसे भिन्न कुछ है ही नहीं इसलिये मैं नहीं भी हूँ क्योंकि मेरे सिवा और कुछ है ही नहीं - जैसे जल से तरंग अभिन्न है और स्वर्ण से स्वर्णाभूषण, अतः नाम-रूप कल्पित है व कारण स्वर्ण ही सत्य है, आभूषण के कण-२ में स्वर्ण ही समाया हुआ है इसी प्रकार आदि-मध्य-अंत में एक भगवान ही है। मैं सभीभूत प्राणियों की आत्मा हूँ, मुझमें मुझसे ही सब भूत प्राणी उत्पन्न होते हैं, रहते हैं व लीन हो जाते हैं और अंत में एक मैं ही शेष रहता हूँ। आत्म तत्त्व के जिज्ञासु को हे ब्रह्मन् ! इतना ही जानने योग्य है। कारण का कार्य में अन्वय है तथा कार्य का कारण में सदा व्यतिरेक है। ये जो ज्ञान मैंने तुम्हें दिया है परम् समाधि के द्वारा तुम इसे धारण करो।	
13	13 Mar + Apr	24		माण्डूक्य उपनिषद भाग २		चराचर जगत ओंकार का ही विस्तार है, ओंकार वाचक है और ब्रह्म वाच्य है अतः ये चराचर जगत ब्रह्म का ही रूप है। ब्रह्म हमारा आत्मा है और आत्मा ब्रह्म है इस प्रकार ब्रह्म एवं आत्मा का एकत्व बताया है। **४थे चरण के निरूपण** हेतु प्रथम ३ चरणों का निषेध करके ४थे को बताते हैं क्योंकि ४थे चरण में इन तीनों की पहुँच नहीं है। वह ४था अथवा तुरीय सच्चिदानंद स्वरूप ब्रह्म आत्मा है। जहाँ न विश्व है, न तैजस है न प्राज्ञ है इस प्रकार तीनों का निषेध कर दिया अर्थात् ४थे चरण में जा०-स्व०-सु० तीनों अवस्थाऐं एवं का इनके स्वामी, ये कोई नहीं हैं वह शुद्ध आत्मा का ब्रह्म स्वरूप है उस तत्त्व में देह इ०म०बु० कोई नहीं है इसलिये उसे ऐसा बताया है कि वह अदृष्टं, अव्यवहार्यं, अग्राह्यं, अलक्षणं, अचिन्तयं तथा वह वाणी का भी विषय नहीं है, एक हमारा तुम्हारा साक्षी चेतन आत्मा स्वयं ही अपने रहने व तुरीय तत्त्व में प्रमाण है क्योंकि और तो कोई रहता नहीं, ४थे चरण में, वहाँ जा०-स्व०-सु० प्रपंच नहीं है अतः वह परम् शान्त एवं परम् कल्याण स्वरूप है ४था, वह एक अद्वितीय है दूसरा कोई है ही नहीं वहाँ पर - उसी को ४था स्वरूप माना गया है, वही हमारा तुम्हारा वास्तविक स्वरूप तत्त्व आत्मा है।, अपने परम् कल्याण के लिये, मोक्ष के लिये अथवा जन्म-मरण से छूटने के लिये इसी आत्म तत्त्व को जानना चाहिये ४था चरण Q & N iii pg 25 देखें	
14	14 Mar + Apr	29				वेदो का ही विस्तार गीता, रामायण, १८ पुराण तथा १ लाख श्लोकोंवाली महाभारत है **पाँच माताओं का निरूपण**	
15	15 Mar + Apr	29		माण्डूक्य उपनिषद भाग ३		**कृष्णयजुर्वेद की मुक्तिकोपनिषद** - भगवान राम से हनुमानजी की प्रार्थना - 'तद्रूपं ज्ञातु मिच्छामि तत्त्वतः राम मुक्तये...' इस पर भगवान राम ने कहा :: मेरा निनि० स्वरूप वेदान्त में सम्यक प्रकार से स्थित है अतः तुम वेदान्त की शरण लो। वेदान्त सभी वेदों में व्यापक है जैसे तिलों में तेल व दूध में घृत । **वेद ४ प्रकार के हैं** :- १०६ शाखा वाला यजुर्वेद, २१ शाखा वाला ऋग्वेद, १००० शाखा वाला सामवेद और ५० शाखा वाला अथर्ववेद । प्रत्येक शाखा की एक-२ उपनिषद है इस प्रकार कुल ११८० उप- निषद हैं, इनमें से १०८ उप० मुख्य हैं, उनमें से ३२ श्रेष्ठ हैं और उनमें से भी १० श्रेष्ठतम् हैं। इन दस में से भी माण्डूक्य उप० केवल **१२ मंत्रों** वाली सबसे छोटी और सर्वोत्तम है । मोक्ष की इच्छा रखने वाले के लिये एक माण्डूक्य उप० ही पर्याप्त है, इसके द्वारा जीव - ईश्वर - माया - ब्रह्म तथा निजस्वरूप का सम्यक बोध हो जाता है। **अथर्ववेद-मा०उ० ::: ओंकार की ३ मात्राओं का ३नों**	

						अवस्थाओं व उनके स्वामियों से एकता जागृत-अकार-विश्व की एकता की गयी है, स्वप्न-उकार-तैजस की एकता की गयी है व सुषुप्ति-मकार-प्राज्ञ की एकता की गयी है। इस प्रकार से ओंकार की मात्राओं और स्वामियों की एकता हो गयी। इनसे परे ४था स्वरूप तुरीय है वह अमात्र ओंकार हमारा तुम्हारा स्वरूप शुद्ध सच्चिदानंद ब्रह्म आत्मा है।	
16	16 Mar + Apr	29	⊕			**पाँच माताओं का निरूपण**	
17	17 Mar + Apr	37	⊕	⊕		**अथर्ववेद-तैत्रीय उपनिषद** सृष्टिक्रम परमात्मा से अथवा हमारी तुम्हारी आत्मा से सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ फिर आकाश से → वायु → अग्नि → जल → पृथ्वी → औषधियॉं → अन्नं → **पुरुषः** **भगवान कृष्ण का गीता में उपदेश** :- सभी **भूत प्राणी** अन्न से उत्पन्न होते हैं ← अन्न मेघ से ← मेघ यज्ञ से ← यज्ञ कर्म से ← कर्म वेद से ← वेद अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न होता है अतः परमात्मा ही सबका कारण है। परमात्मा मेघ यज्ञ कर्म आदि सभी में व्यापक है क्योंकि कारण अपने कार्य में व्यापक होता है इसलिये परम्ब्रह्म परमात्मा कण-कण में व्यापक सर्वकारण हैं ७ धातुऐं अन्न के पाचन से सात धातुऐं बनती हैं जो शरीर को धारण करती हैं तथा इनमें से एक के भी न रहने से यह शरीर नहीं रहेगा ::- रस → रक्त → मॉस → मेदा → अस्थि → मज्जा → शुक्र/वीर्य/बीज :: कृष्णयजुर्वेदीय **गर्भोपनिषद** - सविस्तार	
18	18 Mar + Apr	21	⊕			**पाँच माताओं का निरूपण**	
19	19 Mar + Apr	35	⊕	⊕		**अथर्ववेद-तैत्रीय उपनिषद** सृष्टिक्रम सृष्टि के आदि में एक सच्चिदानंद भगवान ही थे, भगवान की इच्छा होने पर परमात्मा से अथवा हमारी तुम्हारी आत्मा से सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ फिर आकाश से → वायु → अग्नि → जल → पृथ्वी → औषधियॉं → अन्नं → **पुरुषः** ७ धातुऐं ::- रस → रक्त → मॉस → मेदा → अस्थि → मज्जा → शुक्र/वीर्य/बीज :: अन्न के पाचन से सात धातुऐं बनती हैं जो शरीर को धारण करती हैं तथा इनमें से एक के भी न रहने से यह शरीर नहीं रहेगा कृष्णयजुर्वेदीय **गर्भोपनिषद** - सविस्तार	
20	20 Mar + Apr	35	⊕	⊕		वेद कहता है कि भगवान ने सृष्टि के आदि में मनुष्यों के कल्याण हेतु व श्रेयसुख के लिये 'कर्म-भक्ति-ज्ञान' ३ योग बताये हैं। कर्मयोग अनन्त जन्मों के पापों का नाश करके मन को निर्मल बना देता है फिर इस मन में भक्ति उत्पन्न होती है, भगवान का ध्यान-चिन्तन ही भक्ति है जिससे मन एकाग्र हो जाता है तथा जन्म-मृत्यु के बन्धन से छूटने के लिये ज्ञानयोग है इसे वेदान्त भी कहते हैं, ये वेदों का अन्तिम काण्ड है कर्मयोग विशेष धर्म - अपने वर्णाश्रमपदाधिकार के अनुसार कर्म करना ही कर्मयोग है। गुरु-शिष्य का धर्म निरूपण। वेदाध्ययन वेदपाठ व संगीत शिक्षा हेतु ब्रह्मा बृहस्पति व तुम्बुरु का लंका में रावण द्वारा अपमान कथा	
21	21 Mar + Apr	41	⊕	⊕	⊕	**अथर्ववेद-तैत्रीय उपनिषद** सृष्टिक्रम सृष्टि के आदि में एक सच्चिदानंद भगवान ही थे, भगवान की इच्छा होने पर परमात्मा से अथवा हमारी तुम्हारी आत्मा से सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ फिर आकाश से → वायु → अग्नि → जल → पृथ्वी → औषधियॉं → अन्नं → **पुरुषः**। हमारी तुम्हारी आत्मा को और परमात्मा को इस श्रुति ने एकरूप बता दिया देह संरचना पंचभूतों से सम्पूर्ण जगत उत्पन्न हुआ अतः पंचभूत कारण व संसार कार्य है, कार्य अपने कारण से भिन्न नहीं होता है। पाताल पृथ्वी और स्वर्ग - ये सब पंचभूतों का ही कार्य है। पंचभूतों से तीन देह बनते हैं- स्थूल सूक्ष्म और कारण। ऑंखों से दिखाई देने वाला पंचभूतों के पंचीकरण से २५ तत्वों का **'स्थूलशरीर'** बनता है :: **पृथ्वी** से अस्थि चर्म नाड़ी रोम मॉस, **जल** से मूत्र श्लेष्म स्वेद रक्त वीर्य, **अग्नि** से भूख प्यास आलस्य मोह मैथुन, **वायु** से हाथ-पैर का फैलना-सिकोड़ना मुँह खोलना-बंद करना ऑंख खोलना मूँदना स्वॉंस लेना-छोड़ना, **आकाश** से काम क्रोध लोभ मोह भय । स्थूल शरीर के भीतर सूक्ष्म शरीर है। अपंचीकृत पंचभूतों से १६ तत्वों का **'सूक्ष्मशरीर'** बनता है - ५ कर्मेन्द्रियॉं ५ ज्ञानेन्द्रियॉं ५ प्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार एवं इनके विषय शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध साक्षात् क्रमशः आकाश वायु अग्नि जल और पृथ्वी से बने हैं। **५ ज्ञानेन्द्रियॉं** :- आकाश से श्रोत्र-शब्द, वायु से त्वचा-स्पर्श, अग्नि से नेत्र-रूप, जल से जिह्वा-रस, पृथ्वी से घ्राण-गन्ध **५ कर्मेन्द्रियॉं** :- आकाश से वाक्-वाणी, वायु से हाथ-लेन देन, अग्नि से पैर-गमनागमन, जल से उपस्थ-मूत्र त्याग, पृथ्वी से गुदा-मल त्याग । पंचभूतों से **५ प्राण** :- आकाश से प्राण -स्वॉंस लेना, वायु से अपान-स्वॉंस छोड़ना, अग्नि से व्यान-सन्धियों में व्यापक होकर हलचल करती है, जल से समान-नाभिस्थान रहती है फिर भोजन का पाचन करके ७ धातु रस रक्त मॉस मेदा शुक्र बनाती है, पृथ्वी से उदान-कंठ में अन्न जल का विभाजन **चतुष्ट्य अंतःकरण** :- १ वायु से मन : संकल्प-विकल्प २ अग्नि से बुद्धि : विशुद्ध, निश्चयात्मक, बुद्धि में ब्रह्म का प्रतिबिम्ब पड़ने से वह ज्ञान स्वरूप होता है, वही जीवात्मा कहलाता है ३ जल से चित्त : चिन्तन ४ पृथ्वी से अहंकार - अज्ञान काल में इसे देह में अशुद्ध-अहंकार होता है कि मैं स्त्री-पुरुषादि हूँ तथा ज्ञान पश्चात् इसे ही ब्रह्म में शुद्ध-अहंकार होता है कि मैं देह नहीं हूँ मैं सच्चिदानंद ब्रह्म हूँ । अपने स्वरूप का अज्ञान-अंधकार ही **'कारणशरीर'** है इससे ही सूक्ष्म और स्थूलशरीर बने हैं तीनों शरीर हमारे हैं पर हम शरीर नहीं हैं हमारा स्वरूप तो तीनों से अलग तीनों देहों में रहने व इनको जानने वाला जीवात्मा है। जिसने तीन को गिन दिया वह ४था स्वयं-सिद्ध ज्ञानवान आत्मा हमारा स्वरूप है। जीवात्मा का जन्म-मरण नही होता, हमारा स्वरूप सच्चिदानंद ब्रह्म है	1
22	22 Mar + Apr	32	⊕			**पाँच माताओं का निरूपण**	
23	23 Mar + Apr	39	⊕	⊕	⊕	**अथर्ववेद-तैत्रीय उपनिषद** सृष्टिक्रम सृष्टि के आदि में एक सच्चिदानंद भगवान ही थे, भगवान की इच्छा होने पर परमात्मा से अथवा हमारी तुम्हारी आत्मा से सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ फिर आकाश से → वायु → अग्नि → जल → पृथ्वी → औषधियॉं → अन्नं → **पुरुषः**। हमारी तुम्हारी आत्मा को और परमात्मा को इस श्रुति ने एकरूप बता दिया । सविस्तार देह संरचना (Same as 21st Mar + Apr – see above)	2
24	24 Mar + Apr	32	⊕			**पाँच माताओं का निरूपण**	
25	25 Mar + Apr	37	⊕	⊕	⊕	**अथर्ववेद-तैत्रीय उपनिषद** सृष्टिक्रम सृष्टि के आदि में एक सच्चिदानंद भगवान ही थे, भगवान की इच्छा होने पर परमात्मा से अथवा हमारी तुम्हारी आत्मा से सर्वप्रथम आकाश उत्पन्न हुआ फिर आकाश से → वायु → अग्नि → जल → पृथ्वी → औषधियॉं → अन्नं → **पुरुषः**। हमारी तुम्हारी आत्मा को और परमात्मा को इस श्रुति ने एकरूप बता दिया सविस्तार देह संरचना (Same as 21st Mar + Apr – see above) तीन शरीरों के अन्तर्गत् ३ अवस्थायें भी आ जाती हैं = जागृत में स्थूलदेह, स्वप्न में सूक्ष्मदेह व सुषुप्ति में कारणदेह । तीनों देह व तीनों अवस्थायें माया मात्र हैं । इन्हीं ३नों के अन्तर्गत् ५ कोष बताये हैं :- १ **अन्नमय कोष** - जो अन्न से बनता है अन्न खाकर जीता है और फिर पृथ्वी में लीन हो जाता है = अन्न चक्र :- भूत प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं, अन्न मेघ से, मेघ यज्ञ से, यज्ञ कर्म से, कर्म वेद से तथा वेद अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न होता है अतः सर्वव्यापक परमात्मा ही सर्वकारण है २ **प्राणमय कोष** = ५ कर्मेन्द्रियॉं + ५ प्राण ३ **मनोमय कोष** = ५ ज्ञानेन्द्रियॉं + मन ४ **विज्ञानमय कोष** = ५ ज्ञानेन्द्रियॉं + बुद्धि ५ **आनंदमय** कोष = स्वरूपाज्ञान अथवा अपने स्वरूप सच्चिदानंद आत्मा को न जानना, इस अज्ञान को ही आनंद कोष, कारण शरीर अथवा सुषुप्ति अवस्था भी कहते है, यह घोर अज्ञान अंधकार निद्रारूप है। उक्त ३ शरीर / ३ अवस्था / ५ कोष - सब एक ही बात है, ये सब पंचभूतों से बने हैं। हमारा-तुम्हारा स्वरूप इन सबसे अलग है, हम ४थे चेतन आत्मा हैं। ये तीनों जड़ माया के कार्य हैं। हमारा स्वरूप अजन्मा द्रष्टा साक्षी सच्चिदानंद ब्रह्म है।	3
26	26 Mar + Apr	30	⊕	⊕		वेद में ३ काण्ड हैं जीवों के परम् कल्याण के लिये भगवान ने ३ योग कहे हैं - कर्मयोग, भक्तियोग व ज्ञानयोग कर्मयोग धर्म ही कर्म एवं कर्म ही धर्म हैं। पिता-पुत्र पति-पत्नि गुरु-शिष्य ब्रह्मचारी-गृहस्थादि सभी का धर्म का वेद में निरूपण किया गया है। अर्जुन! अपनी महामाया शक्ति द्वारा मैं ४ वर्णों की रचना करता हूँ पर वास्तव में मैं अकर्ता हूँ। सत्-रज-तम् तीन गुणों के अनुसार केवल मनुष्यों में ही नहीं अपितु पशु-पक्षी वृक्ष-पर्वत आदि सारी सृष्टि में मैंने ४ वर्णों की रचना की है इस प्रकार सारी सृष्टि तीनगुण वाली है। अब मैं ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य एवं शूद्रों के स्वाभाविक धर्मों का वर्णन करता हूँ, अपने-२ वर्णाश्रमपदाधिकार के अनुसार कर्तव्य कर्म विशेष धर्म हैं - विशेष धर्म :- **ब्राह्मण के धर्म/कर्म** :- १ **शम** - मननिग्रह २ **दम** - इन्द्रियनिग्रह ३ **शौंचं** - तन स्नान से, मन सत्य से, बुद्धि ज्ञान से तथा जीवात्मा की शुद्धि विद्या यानि भगवत् प्राप्ति के साधन और तप से ४ **क्षान्ति** - अपराधी को भी क्षमा ५ **आर्जवम्** - सरलता ६ **ज्ञान** (वेद पुराण गीता रामायण का सम्यक ज्ञान) + **विज्ञान** (वेद द्वारा जाने गये ब्रह्म में स्थिति यानि वेद में निष्ठा) ७ **आस्तिक्यं** **क्षत्रिय के धर्म** :- **शौचं, तेजो, धृतिं, दाक्ष्यं, अपलायनम्, दानं** एवं **ईश्वर भाव** **वैश्य के धर्म** :- **कृषि, गौरक्षा व गौपालन, वाणिज्य** **शूद्र के धर्म** :- ३नों **बड़े भाईयों की सेवा**	a

27	27 Mar + Apr	33	⊕	⊕		चारों वेदों में ३ काण्डों का वर्णन है। कर्मकाण्ड चरण, भक्तिकाण्ड हृदय तथा ज्ञानकाण्ड वेदों का सिरोभाग है - वेदों में उपनिषदों को ऋगवेद की मूर्धा, यजुर्वेद का मस्तिष्क, अथर्व का मुण्ड व सामवेद का सिर बताया है। उपनिद/गीता ज्ञानकाण्ड है व वेदों का यह अन्तिम भाग वेदांत कहलाता है। सिरोभाग सर्वश्रेठ माना जाता है क्योंकि सिर में ही सभी ज्ञानेन्द्रियाँ और बुद्धि है तथा जीवन भी सिर से ही है **कृष्णयजुर्वेदीय ब्राह्मणोपनिषद ::** सृष्टिक्रम सृष्टि के आदि में एक अद्वितीय सच्चिदानंद ब्रह्म ही था → अव्यक्त → महत् तत्त्व/समष्टि बुद्धि → अहंकार/ समष्टि मन → पंचतन्मात्राऐं → पंचभूत → अखिलं जगत। अव्यक्त परमात्मा की त्रिगुणात्मिका अनादि शक्ति है जिसे अविद्या, परा और माया भी कहते हैं जो क्षणमात्र में अनंत ब्रह्माण्डरूप जगत की रचना कर देती है। सारा दृश्य प्रपंच माया है और द्रष्टा ब्रह्म है। माया ब्रह्म से उत्पन्न होती है व पुनः ब्रह्म में समा जाती है और ब्रह्मरूप ही हो जाती है जैसे पुरुष और छाया। अंत में एक अद्वितीय परमब्रह्म परमात्मा ही शेष रह जाता है।	
28	28 Mar + Apr	28	⊕	⊕		भगवान की वाणी वेद त्रिकाण्डमय है 'कर्म-उपासना-ज्ञान', निष्काम कर्म से अनेक जन्मों के पापों का नाश करने के लिये कर्मयोग, मन की एकाग्रता के लिये भक्तियोग व अज्ञान के नाश के लिये ज्ञानयोग हैं। कर्मकाण्ड वेद का पहला काण्ड है जो धर्म-कर्म की शिक्षा देता है। कर्मयोग अपने-अपने वर्णाश्रमपदाधिकार के अनुसार कर्तव्य कर्म करना ही धर्म या कर्मयोग है, धर्म ही कर्म एवं कर्म ही धर्म हैं। पिता-पुत्र पति-पत्नि गुरु-शिष्य राजा-प्रजा ब्रह्मचारी- गृहस्थादि सभी का धर्म का निरूपण विशेष धर्म है तथा सभी वर्णाश्रमपदाधिकार के लिये विहित कर्म सामान्य कर्म/धर्म कहलाते हैं सामान्य धर्म - १. अहिंसा, २. सत्य, ३. अस्तेय, ४. ब्रह्मचर्य, ५. अपरिग्रह, ६. अक्रोध, ७. गुरुसुश्रुषा, ८. शौचं, ९. सन्तोषं, १०. आर्जवम्, ११. अमानित्वं, १२. अदम्भित्वं, १३. आस्तिकत्वं - ईश्वर वेद गुरु में विश्वास, सबको अपने धर्म का पालन करना चाहिये।	b
29	29 Mar + Apr	28	⊕	⊕	⊕	**सामवेद-छा०उ०-छटा अध्याय** ::- **उद्दालक ऋषि का पुत्र श्वेतकेतु से प्रश्न** - हे पुत्र ! क्या तूने वह विद्या पढ़ी है जिस एक को जान लेने से - जो कभी नहीं जाना वह जाना हुआ, जो कभी नहीं सुना वह सुना हुआ व जो कभी नहीं देखा वह देखा हुआ हो जाता है? पुत्र ने कहा कि नहीं पिताजी वह विद्या तो मैंने नहीं पढ़ी तब **उद्दालक ऋषि बोले** - हे पुत्र! सवधान मन से सुन और समझ, जैसे एक माटी से बने जिनने भी घट-मठ हैं वह सब माटी रूप ही हैं जो पृथ्वी से उत्पन्न होते हैं पृथ्वी में रहते हैं व फिर पृथ्वी में ही मिल जाते हैं तो एक माटी के ज्ञान से सभी घट-मठ जान लिये जाते है। इसी प्रकार परम् पिता परमेश्वर भगवान को जानने से सारे जगत का ज्ञान हो जाता है क्योंकि भगवान जगत के कारण हैं। भगवान में ही जगत उत्पन्न होता, रहता और विलीन हो जाता है फिर एक भगवान ही शेष रह जाते हैं। ऐसे ही सुवर्ण एक है और सुवर्ण के बने आभूषण अनेक हैं परन्तु वह सुवर्ण से भिन्न नहीं हैं क्योंकि सोना निकालने पर कोई नाम-रूप आभूषण शेष नहीं रहेगा अतः सोना ही सत्य है नामरूप सब वाणी के विकार हैं :: सृष्टि के आदि में एक अद्वितीय परम् ब्रह्म परमात्मा ही थे, उनसे → अग्नि → जल → पृथ्वी → सारा संसार बन गया। अतः हे पुत्र ! एक ब्रह्म ही सम्पूर्ण जगत का कारण हुआ। कारण एक है व उनका कार्य ये जगत अनेक रूप है। ये जगत सच्चि०ब्रह्म में ही उत्पन्न होता रहता व विलीन हो जाता है फिर एक परमात्मा ही शेष रहता है यानि एक परमात्मा के ज्ञान से सारे जगत का ज्ञान हो जाता है। स्वर्णाभूषण की तरह ये जगत भी अपने कारण अद्वितीय सच्चि० ब्रह्म से अभिन्न है। इसलिये परमात्मा ही सत्य है व संसार असत्य है - 'ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या जीवो ब्रह्मैव न परा' ।।	
30	30 Mar + Apr	33	⊕	⊕		गुरु के बिना व्यवहारिक अथवा पारमार्थिक कोई भी ज्ञान नहीं हो सकता, सभी गुरु माननीय हैं। वेद त्रिकाण्डमय है, तीनों काण्ड में क्रम-समुच्चय है। **कर्म-भक्ति-ज्ञान** क्रमशः तीन कक्षायें हैं। ज्ञानकाण्ड में वेद पूरा हो जाता है तथा ज्ञानकाण्ड में जिज्ञासु की जिज्ञासा भी पूरी हो जाती है, वह मुक्त हो जाता है तदोपरान्त कक्षा और गुरु दोनों ही छूट जाते हैं क्योंकि फिर कुछ करना शेष नहीं रहता। ये संसार एक सागर है, गुरु केवट है तथा वेद में कर्म-उपासना-ज्ञान का उपदेश नौका है। शिष्य भवसागर से पार जाना चाहता है व पार हो जाने पर नौका और केवट दोनों का कोई प्रयोजन नहीं रह जाता हे शिष्य ! ये जगत स्वप्नवत् मिथ्या है, जा०स्व०सु० माया मात्र हैं व ४था इनको देखने वाला ब्रह्म है - तत्त्वमसि, वही तू है - इस ज्ञानकाण्ड में गुरु का अन्तिम उपदेश होता है। भगवान के दर्शन होने पर यानि 'अयं आत्मा बह्म, सो अयं आत्मा' अपने स्वरूप का ज्ञान होने पर अब शिष्य का काम पूरा हुआ, वह दुःखालय जगत से पार हो गया, जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त हुआ, परम् सुख को प्राप्त हुआ सम्यक ज्ञान होने पर शिष्य गुरु को अन्तिम प्रणाम करता है कि आपने वेद वाक्य से मुझे ब्रह्म ज्ञान करा दिया और फिर अपने ब्रह्म स्वरूप में स्थित होता है। अब उसे किसी की आवश्यकता नहीं रहती, वह अपने स्वरूप में लीन रहता है। जीव का अपना घर सच्चिदानंद परमात्मा है, पिता का घर ही पुत्र का घर होता है। अर्जुन, ब्रह्मा का भी पद मिल जाये तो क्या ! ब्रह्मा की भी मृत्यु होती है परन्तु मुझे पाकर जीव का पुर्नजन्म नहीं होता। साध्य के प्राप्त होने पर साधन छूट जाते हैं तीन सत्तायें हैं, स्वप्न प्रतीति मात्र **प्रातिभासिक** सत्ता है जसमें देहों की उम्र कुछ पल ही होती है, जागृत **व्यवहारिक** सत्ता है जिसमें जगत का गुरु-शिष्य आदि सारा व्यवहार होता है एवं इसमें शरीरों की उम्र १०० वर्ष तक होती है व तीसरी **पारमार्थिक** सत्ता है जो परमसत्य जगत का आधार-अधिष्ठान ब्रह्म ही है, इसका ज्ञान ही ब्रह्म ज्ञान है।	
31	31 Mar + Apr	47	⊕			सामवेद :: छा०उ० :: ७तवीं अ०:: नारद-सनतकुमार सम्वाद - नारदजी द्वारा अपनी विद्याओं का वर्णन :- १ चारों वेद जिनमें एक लाख श्लोक हैं (व्यासजी ने चारों वेद का ही विस्तार एक लाख श्लोक वाली महाभारत व अट्ठारह पुराण में किया है) चारों वेदों में कर्मकाण्ड के ८० हज़ार, भक्तिकाण्ड के १६ हज़ार, ज्ञानकाण्ड के ४ हज़ार श्लोक हैं। अपने वर्णाश्रमपदाधिकार के अनुसार सकाम-कर्म से संसार तथा निष्काम-कर्म से भगवान मिलते है - भगवान की आज्ञा से फलासक्ति त्यागकर किये गये कर्म निष्काम-कर्म कहलाते है जिनसे चित्तशुद्धि होती है और जीव ज्ञान का अधिकारी होकर गुरु के अनुग्रह से वह ज्ञान प्राप्त करता है और मुक्त हो जाता है २ इतिास-महाभारत ३ अट्ठारह पुराण ४ व्याकरण (वेद के छः अंग हैं - शिक्षा कल्प व्याकरण निरुक्त छंद ज्योतिष, इनमें व्याकरण वेदों का मुखरूप है) ५ पितृं ६ राशि-गणित ७ देव-उत्पातु ज्ञान ८ निधि-भूगर्भ ज्ञान - क्रमशः	A
32	32 Mar + Apr	37	⊕	⊕		**सामवेद :: छा०उ० :: ७तवीं अ०::** नारद-सनतकुमार सम्वाद - ९ वाकोवाक्य-तर्कशास्त्र १० एकायन-नीतिशास्त्र ११ ब्रह्मविद्या १२ देवविद्या-यज्ञादि १३ भूतविद्या १४ क्षत्रविद्या-धनुर्विद्या १५ नक्षत्रविद्या-ज्योतिष १६ सर्पविद्या-गारुड़ी १७ देवजन विद्या-संगीत इति । हे भगवन ! मैं केवल मंत्रों का ही ज्ञाता हूँ, मैं आत्मा को नहीं जानता। मैंने तत्त्व दर्शियों से सुना है कि जो अपनी आत्मा को जानता है वह शोक-सागर से तर जाता है अतः आप आत्म/ब्रह्मज्ञान देकर मुझे शोक-सागर से पार करें। तब सनतकुमार बोले :- जो भूमा तत्त्व है वही सुखरूप है, अल्प में सुख नहीं है। भूमा नाम महान का है। दुःख निवृत्ति और नित्य शान्ति प्राप्त करने के लिये भूमा को ही जानना चाहिये। इ०म०बु०वाणी जहाँ नहीं पहुँच सकते वह भूमा तत्त्व है तथा जो इ०म०बु० का विषय है वह तो बहुत अल्प है। जो अल्प है वह मरता है तथा भूमा अमृत है जो कभी नहीं मरता, वह सत्-चित्-आनंद रूप है। हे नारद ! जो भूमा है वही हमारा तुम्हारा आत्मा भी है। आत्मा को जानना चाहिये, हमारा *'आत्मा ही ब्रह्म है-ब्रह्म ही आत्मा है'* ईश्वर का अंश होने से जीव भी अविनाशी, अमल और सुखराशि है। भूमा ही जीवात्मा ब्रह्म है। ये शरीर भगवान की माया से बनते बिगड़ते रहते हैं व इन शरीरों में जो द्रष्टा जीवात्मा है वह न जन्मता है और न मरता है, वह ब्रह्म स्वरूप ही है।	B
33	33 Mar + Apr	42	⊕	⊕		भगवान की वाणी वेद है जो **'कर्म-भक्ति-ज्ञान'** त्रिकाण्डमय है, इनका क्रम समुच्चय है। तीन कक्षाओं के बाद ४थी कक्षा ब्रह्म ही है जहाँ पहुँच कर जीव जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त होकर परम् विश्राम को प्राप्त होता है, वह भगवान को पाकर ब्रह्मरूप ही हो जाता है। इस प्रकार वेद ही भगवत् प्राप्ति का मार्ग बता रहा है क्योंकि भगवान ही भगवान का रास्ता बता सकते हैं। वेद भगवान की वाणी है। वेद-पथ छोड़ देने वाले कभी भी भगवान तक नहीं पहुँच सकते। कर्मयोग अपने-अपने वर्णाश्रम एवं पदाधिकार के अनुसार कर्तव्य कर्म करना ही धर्म या कर्मयोग है, धर्म ही कर्म एवं कर्म ही धर्म हैं। पिता-पुत्र पति-पत्नि गुरु-शिष्य राजा-प्रजा ब्रह्मचारी-गृहस्थादि सभी का धर्म का निरूपण कर्मकाण्ड में है। भगवान कहते हैं कि मैं अपनी त्रिगुणात्मिका माया से इस संसार की सृष्टि करता हूँ पर वास्तव में तो मैं अकर्म हूँ। ३ गुणों के आधार से ये सृष्टि ४ वर्ण वाली है - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। परम् पवित्र ओंकार ही मुझे प्राप्त करने का साधन है व ओंकार का विस्तार ही वेद हैं। इस प्रकार साधन भी मैं हूँ और साध्य भी मैं हूँ। अब मैं ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य एवं शूद्रों के स्वाभाविक धर्मों का वर्णन करता हूँ, अपने-२ वर्णाश्रमपदाधिकार के अनुसार कर्तव्य कर्म विशेष धर्म हैं तथा सभी वर्णाश्रमपदाधिकार के लिये विहित कर्म सामान्य कर्म/धर्म कहलाते हैं - विशेष धर्म - **वर्ण के अनुसार ब्राह्मण के धर्म/कर्म** :- १ शम - मननिग्रह २ दम - इन्द्रियनिग्रह ३ शौंचं - तन स्नान से, मन सत्य से, बुद्धि ज्ञान से तथा जीवात्मा की शुद्धि विद्या यानि भगवत् प्राप्ति के साधन और तप से ४ क्षान्ति - अपराधी को भी क्षमा ५ आर्जवम् - सरलता ६ ज्ञान (वेद पुराण गीता रामायण का सम्यक ज्ञान) + विज्ञान (वेद द्वारा जाने गये ब्रह्म में स्थिति यानि वेद में निष्ठा) ७ आस्तिक्यं	c

						क्षत्रिय के धर्म :- शौचं, तेजो, धृतिं, दाक्ष्यं, अपलायनम्, दानं एवं ईश्वर भाव **वैश्य के धर्म :-** कृषि, गौरक्षा व गौपालन, वाणिज्य **शूद्र के धर्म :-** इनों बड़े भाईयों की सेवा । **आश्रम के अनुसार ब्रह्मचारी के धर्म -** गुरुसेवा, विद्याध्ययन, भेद-भाव का त्याग व समानता का व्यवहार **ग्रहस्थ के धर्म -** पति-पत्नि में प्रेम एवं पति-पत्निव्रत धर्म पालन, राजा-प्रजा का पुत्र के समान रक्षा और पालन **वानप्रस्थ के धर्म -** अपने कल्याण के लिये पति-पत्नि का वनगमन/आश्रम में निवास/गुरु आज्ञानुसार जीवन **संन्यासी के धर्म -** सब प्रकार का संन्यास लेकर केवल भगवान का भजन ।।	
34	34 Mar + Apr	36				**सामवेद :: छा०उ० :: ७तवाँ अ०:: नारद-सनतकुमार सम्वाद** - हे भगवन ! मैं केवल मंत्रों का ही ज्ञाता हूँ, मैं आत्मा को नहीं जानता। मैंने तत्त्व दर्शियों से सुना है कि जो अपनी आत्मा को जानता है वह शोक-सागर से तर जाता है अतः आप आत्म/ब्रह्मज्ञान देकर मुझे शोक-सागर से पार करें। तब **सनतकुमार बोले :-** जो भूमा तत्त्व है वही सुखरूप है, अल्प में सुख नहीं है। भूमा नाम महान, वृहत् यानि सबसे बड़ा अथवा ब्रह्म का है। उस भूमा को ही जानने की इच्छा करनी चाहिये। दे०इ०म०बु०व की जहाँ पहुँच नहीं है तथा जो दे०इ०म०बु० को जानता है वह भूमा तत्त्व है। जिसको इ०म०बु० नहीं जानते, मन के सहित वाणी जिसको न जानकर लौट आती है वह ब्रह्म है तथा जो दे०इ०म०बु०प्रा० का विषय होता है यानि शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध - ये संसार, यह बहुत अल्प है जो उत्पन्न हो-होकर नष्ट होता रहता है जैसे समुद्र की लहरें और बुलबुले। जो अल्प है वह मरता है तथा जो भूमा या ब्रह्मतत्त्व है वह सत्-चित्-आनंद सिन्धु अमृत है जो कभी नहीं मरता। हे नारद ! वही तुम्हारी यानि तुम्हारी आत्मा का स्वरूप है। हे नारद ! मैं देह नहीं हूँ अपितु देह में रहने वाला और आँखों से देखने वाला आत्मा हूँ यही ज्ञान का लक्षण है अतः अपनी आत्मा को सच्चि० ब्रह्म जानो, ये नित्य सुख-स्वरूप है इसकी मृत्यु नहीं होती। ये अखंड ज्ञान व अनंत आनंद स्वरूप है। ये अपनी आत्मा ब्रह्म का स्वरूप है। हे भगवन् ! ये आत्मा किसमें स्थित है ? वह आत्मा जो संसार का आधार-अधिष्ठान है, सारा संसार उस ब्रह्म आत्मा में ही उत्पन्न होता है, आत्मा में ही रहता है और फिर आत्मा में ही लय हो जाता है। आत्मा रूपी अधिष्ठान में माया के द्वारा संसार की उत्पत्ति-स्थिति-प्रलय होती रहती है। वह आत्मा ब्रह्म है उसमें दुःख है ही नहीं अतः जो भूमा है वही हमारा तुम्हारा आत्मा भी है। हमारा *'आत्मा ही ब्रह्म है-ब्रह्म ही आत्मा है'* ईश्वर का अंश होने से जीव भी अविनाशी, अमल और सुखराशि है। भूमा ही जीवात्मा ब्रह्म है। ये शरीर भगवान की माया से बनते बिगड़ते रहते हैं व इन शरीरों में जो द्रष्टा जीवात्मा है वह न जन्मता है और न मरता है, वह ब्रह्म स्वरूप ही है।	संपूर्ण C
35	35 Mar + Apr	35				भगवान की वाणी वेद है जो **'कर्म-भक्ति-ज्ञान'** त्रिकाण्डमय है, इनका क्रम समुच्चय है। तीन कक्षाओं के बाद ४थी कक्षा ब्रह्म ही है जहाँ पहुँच कर जीव जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त होकर परम् विश्राम को प्राप्त होता है, वह भगवान को पाकर ब्रह्मरूप ही हो जाता है। इस प्रकार वेद ही भगवत् प्राप्ति का मार्ग बता रहा है क्योंकि भगवान ही भगवान का रास्ता बता सकते हैं। वेद भगवान की वाणी है। वेद-पथ छोड़ देने वाले कभी भी भगवान तक नहीं पहुँच सकते। कर्मयोग अपने-अपने वर्णाश्रम एवं पदाधिकार के अनुसार कर्तव्य कर्म करना ही धर्म या कर्मयोग है, धर्म ही कर्म एवं कर्म ही धर्म हैं तथा सभी वर्णाश्रमपदाधिकार के लिये विहित कर्म सामान्य कर्म/धर्म कहलाते हैं - **कृष्णयजुर्वेद शारीरिकोपनिषद** - सामान्य धर्म :- **१.** अहिंसा, **२.** सत्य, **३.** अस्तेय, **४.** ब्रह्मचर्य, **५.** अपरिग्रह, **६.** अक्रोध, **७.** गुरुसुश्रुषा, **८.** शौचं, **९.** सन्तोषं, **१०.** आर्जवम्, **११.** अमानित्वं, **१२.** अदम्भित्वं, **१३.** आस्तिकत्वं - ईश्वर वेद गुरु में विश्वास, सबको अपने धर्म का पालन करना चाहिये।	d
36	36 Mar + Apr	53				भगवान को जानने का वेद ही साधन है। दो ब्रह्म जानना चाहिये १.**शब्द ब्रह्म** - वेद २.**परम् ब्रह्म**, जो शब्द ब्रह्म में निष्णात् होता है वह परम् ब्रह्म तक पहुँच जाता है, उसे ब्रह्म ज्ञान हो जाता है। प्रेय और श्रेय दो प्रकार के सुख है, प्रेयसुख प्रतीति मात्र है व श्रेयसुख नित्यसुख या आत्मसुख है इसकी प्राप्ति के लिये ही भगवान ने वेद कहे हैं । वेद 'कर्म-भक्ति-ज्ञान' त्रिकाण्डमय है, इनका क्रम समुच्चय है। तीन कक्षाओं के बाद ४थी कक्षा ब्रह्म ही है जहाँ पहुँच कर जीव जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त होकर परम् विश्राम को प्राप्त होता है, वह भगवान को पाकर ब्रह्मरूप ही हो जाता है। भक्तियोग **भागवत्** में **९** प्रकार की भक्ति बताई है - 'श्रवणं कीर्तनं विष्णु स्मरणं पाद सेवनं, अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यं आत्म निवेदन'-आत्म समर्पण ।। भगवान राम द्वारा शबरी को **नवधा-भक्ति** का उपदेश :- १ संतों का संग २ भगवान के निनि० एवं ससा० स्वरूप का ज्ञान व उनमें प्रेम	e
37	37 Mar + Apr	34				भक्तियोग राम और कृष्ण अभेद हैं, समय समय पर अपना रूप बदल लेते है। भगवान राम शबरी के आश्रम में नवधा भक्ति का उपदेश कर रहे हैं :- १ **संतों का संग** - भगवान की कृपा से संत भगवत् तत्त्व को जानते हैं, भगवान के स्वरूप का कथन करना ही उनकी कथा है। भगवान के दो स्वरूप हैं - निनि० और ससा०, इन दोनों स्वरूपों को जानने वाला ही भगवान की कथा कह सकता है २ भगवान के निनि० व ससा० स्वरूप का ज्ञान - **भगवत् कथा में प्रेम** - व्यापक और प्रकट २ प्रकार की अग्नि है। उष्णता व प्रकाश, ये व्यवहार इस ससा०-प्रकट अग्नि में ही है, निनि०-सामान्य अग्नि अव्यवहारी है ऐसे ही भगवान के भी २ रूप हैं - व्यापक-निनि० और प्रकट-ससा०, अग्नि की ही भाँति सारा व्यवहार राम-कृष्ण आदि ससा० भगवान में ही होता है व निनि०- व्यापक ब्रह्म में कोई व्यवहार नहीं होता, वही सच्चि०ब्रह्म सभी जीवों के हृदय में विराजमान है, इसी के अज्ञान से जीव दुःखी हैं।	f
38	38 Mar + Apr	47				भगवान राम का शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश :- १ **संतों का संग** - भगवान की कृपा से संत भगवत् तत्त्व को जानते हैं, भगवान के स्वरूप का कथन करना ही उनकी कथा है। भगवान के दो स्वरूप हैं - निनि० और ससा०, इन दोनों स्वरूपों को जानने वाला ही भगवान की कथा कह सकता है। सीताजी द्वारा भगवान **राम के निनि० स्वरूप का निरूपण** - 'रामं विद्धि परम् ब्रह्म सच्चिदानंदम् अद्वयं, सर्वोपाधि विनिर्मुक्तं सत्ता मात्रं अगोचरं । आनंदम् निर्मलं शान्तं निर्विकारं निरंजनं, सर्वव्यापिनात्मानं स्वप्रकाशं अकल्मषं ।।'	g
39	39 Mar + Apr	36				भगवान राम का शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश :- है २ **भगवत् कथा में प्रेम** - संतों से मेरी कथा सुनना। भगवान के स्वरूप का निरूपण ही भगवत्-कथा है। भगवान के निनि० स्वरूप को जानने मात्र से जीव भव-बन्धन से मुक्त हो जाता है, उसे कभी दुःख और मृत्यु नहीं आते व वह परम् शन्ति को प्राप्त होता है। सीताजी द्वारा भग० **राम के निनि० स्वरूप का निरूपण** - 'रामं विद्धि परम् ब्रह्मम...' तथा प्रसंग से **सीताजी द्वारा निजी स्वरूप निरूपण** :- मैं सीता महामाया शक्ति हूँ मुझे ही प्रकृति कहते हैं। सारे जगत की उ०पा०सं० का काम मैं करती हूँ, राम तो निनि० और अकर्म सत्ता मात्र हैं। शरीरों के समूह को ही जगत कहते हैं। राम-कृष्ण आदि के शरीर ईश्वर के ससा० स्वरूप हैं तथा मनुष्य देव-दानव पशु-पक्षी आदि जीव के देह जीव के ससा० स्वरूप हैं। राम जगदीश्वर हैं, राम की सत्ता व प्रेरणा पाकर जगत की उ०पा०सं० का काम जानकीजी करती हैं। सीता-राम जगत के माता-पिता हैं, सारा संसार सीता-रामजी की संतान है अतः ये चराचर जगत सीता-रामजी का ही स्वरूप है। ईश्वर अथवा जीव सभी के देहों में बैठकर देखने वाला राम तथा दिखाई पड़ने वाले देह सीता के हैं। जगत में ये दो ही पदार्थ हैं। जीव ईश्वर का अंश है अतः ईश्वररूप चेतन ज्ञान स्वरूप अविनाशी निर्मल एवं सुखरूप है। जीव का जन्म नहीं होता। शरीर माया का अंश होने से विकारी और जन्मते-मरते है। निनि० द्रष्टा राम देखते हैं और ससा० सीता के स्वरूप देह दिखाई पड़ते हैं।	h
40	40 Mar + Apr	33				वेद को जानने से भगवान का ज्ञान हो जाता है। वेद का अर्थ ही ज्ञान है। स्वर-व्यंजन रूप वेद में स्वयं कोई अर्थ नहीं घटता। ४रों वेद के मंत्रों का अर्थ गुरु ही बताते हैं। विद् धातु के ४ प्रकार हैं :- १ **विद् ज्ञाने** - वांगमय वेद २ **विद् सत्तायाम्** - व्यापक/सामान्य ज्ञान यानि ब्रह्म ३ **विद् विचारणा** - प्रकट/विशेष ज्ञान, सर्वज्ञ ईश्वर या अल्पज्ञ जीव, जानाति-इच्छति-करोति ४ **विद् लाभे** - ईश्वर कृपा से जीव को ब्रह्मज्ञान का लाभ सुख दो प्रकार के हैं, इन्द्रिय-विषय के संयोग से उत्पन्न सुख प्रेयसुख तथा नित्य सुख ही श्रेयसुख है। श्रेयसुख की प्राप्ति के लिये वेद में कर्म-उपासना-ज्ञान तीन काण्ड हैं जिनसे क्रमशः चित्तशुद्धि, चित्त एकाग्रता और अपने स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर जीव भव-बंधन से मुक्त हो जाता है नवधा भक्ति - **संतों का संग एवं भगवत् कथा में प्रेम** - भगवान के दो स्वरूप हैं - निनि० और ससा०, इन दोनों स्वरूपों को जानने वाला ही भगवान की कथा कह सकता है। सीताजी द्वारा भगवान **राम के निनि० स्वरूप का निरूपण** - 'रामं विद्धि परम् ब्रह्मम...' तथा प्रसंग से **सीताजी द्वारा निजी स्वरूप निरूपण** :- मैं सीता महामाया शक्ति हूँ मुझे ही प्रकृति कहते हैं। सारे जगत की उ०पा०सं० का काम मैं करती हूँ, राम तो निनि० और अकर्म सत्ता मात्र हैं। शरीरों के समूह को ही जगत कहते हैं। राम-कृष्ण आदि के शरीर ईश्वर के ससा० स्वरूप हैं तथा मनुष्य देव-दानव पशु-पक्षी आदि जीव के देह जीव के ससा० स्वरूप हैं। राम जगदीश्वर हैं, राम की सत्ता व प्रेरणा पाकर जगत की उ०पा०सं० का काम जानकीजी करती हैं। सीता-राम जगत के माता-पिता हैं, सारा संसार सीता-रामजी की संतान है अतः ये चराचर जगत सीता-रामजी का ही स्वरूप है। ईश्वर अथवा जीव सभी के देहों में बैठकर देखने वाला राम तथा दिखाई पड़ने वाले देह सीता के हैं। जगत में ये दो ही पदार्थ हैं।	i

41	41 Mar + Apr	35				**आनंद रामायण :: मनोहर काण्ड :: 'श्रीरामजयरामजयजयराम' महामंत्र** का स्वरूप एवं अर्थ निरूपण ::- राम शब्द के पूर्व श्री लगायें-'**श्री** राम', मध्य में जय लगायें-'**श्री** राम **जय** राम', फिर दो जय और लगायें-'**श्री** राम **जय** राम **जय जय** राम' - इस प्रकार श्रीरामजयरामजयजयराम महामंत्र संपन्न हुआ अर्थात् तीन बार जिसके लिये जय बोल दिया जाये उसे बहुत पक्का समझा जाता है इसलिये राम के लिये ३ बार जय का प्रयोग हुआ है। **'श्री'** नाम सीता का है और **'राम'** नाम सच्चिदानंद ब्रह्म का है जो उदय-अस्त रहित ज्ञान के सूर्य हैं जहाँ अज्ञान/मोह रूपी रात्रि का लेश भी नहीं है क्योंकि रात्रि तब होती है जब सूर्य अस्त हो जाये। जगत में सूर्य, चन्द्र, तारागण, विद्युत एवं अग्नि उदय-अस्त होने वाले जड़ प्रकाश हैं परन्तु राम रूपी ज्ञान-सूर्य सदा एक समान प्रकाशमान रहते हैं तथा वे अन्य सभी प्रकाशों के प्रकाशक हैं **'श्री'** राम की महामाया शक्ति हैं जो पुरुष की छाया के समान हैं। पुरुष सदा रहता है पर छाया सदा नहीं रहती, छाया पुरुष से उत्पन्न होती है, पुरुष के आश्रित रहती है व फिर पुरुष में ही समा जाती है। छाया को ज्ञान नहीं है और पुरुष ज्ञानवान है। **छाया को सीता और पुरुष को राम बताया है।** सीता आती-जाती है इसलिये 'श्री' को राम के साथ नहीं जोड़ा है किन्तु राम तो तीनों काल में एक समान रहते हैं। **राम सत्य हैं** व **सीता छाया** होने से सदा नहीं रहतीं, हमारे-तुम्हारे शरीर छाया के समान जड़ हैं। हमारा-तुम्हारा स्वरूप राम है शरीर नहीं। राम ही सब शरीरों में बैठकर जा०-स्व०-सु० को देखते हैं, जा०-स्व०-सु० माया मात्र हैं। हमारा स्वरूप सत्य-ज्ञान-आनंद से पूर्ण 'पुरुष' है। हम शरीर रूपी पुर में रहते हैं और हम पुर को जानते हैं। पुर अथवा शरीर सत्य नहीं हैं हम सत्य हैं। छाया रूपी शरीर सत्य पुरुष में ही समा जाता है यानि छाया सती हो जाती है केवल परमसत्य राम ही शेष रहते हैं - यही इस मंत्र का अर्थ है इस मंत्र का प्रतिदिन **२१** बार जप करने से जीव ब्रह्म हत्या से भी छूट जाता है	
42	42 Mar + Apr	37				हे अर्जुन! मनुष्यों को श्रेयसुख की प्राप्ति के लिये मैंने त्रिकाण्डमय वेद कहा। अनेक जन्मों के पापों के नाश हेतु **कर्मकाण्ड** है, मन को एकाग्र करने के लिये **भक्तिकाण्ड** एवं अज्ञान के नाश के लिये **ज्ञानकाण्ड** है। वेदों के अन्तिम ज्ञानकाण्ड को वेदान्त भी कहते हैं। कर्मकाण्ड में सामान्य एवं विशेष धर्मों का व भक्तिकाण्ड में ९ प्रकार की भक्ति का वर्णन है। पर से परे दिव्य परम् पुरुष सच्चि० ब्रह्म में भक्त के नाम-रूप का समर्पण ही 'भक्ति' है। नाम-रूप ही शरीर हैं और शरीरों का समूह ही संसार है। नाम-रूप से परे सच्चि० ब्रह्म है। नाम-रूप का समर्पण करके उस परम्ब्रह्म से एकरूप होना ही भक्ति है। नवधा भक्ति - **संतों का संग एवं भगवत् कथा में प्रेम :-** संग नाम आसक्ति का है, संतों में अनुराग हो फिर उनसे भगवान की कथा सुनें। भगवान के स्वरूप का कथन ही भगवत् कथा है। शास्त्रों में भगवान के निनि० और ससा० दो स्वरूप बताये हैं। व्यापक अग्नि के समान भगवान का निनि० स्वरूप भी व्यापक और अव्यवहारी है तथा प्रकट अग्नि के समान ही सब व्यवहार ससा० स्वरूप में ही हैं। निनि० अग्नि सत् है व ससा० अग्नि सत् नहीं है क्योंकि वह सदा नहीं रहती। प्रकाश और उष्णता का व्यवहार सम्पन्न करके प्रकट अग्नि अपने व्यापक निनि० स्वरूप में समा जाती है। भगवान का निनि० स्वरूप एक अद्वितीय किन्तु अव्यवहारी है, संसार का काम भगवान के राम-कृष्ण आदि ससा० अवतारों से ही बनता है निनि० स्वरूप जीव और ईश्वर दोनों का एक ही है केवल ससा० शरीरों में ही भेद है। ईश्वर अपनी इच्छा से अपना शरीर निर्मित करते हैं, वे पंचभौतिक नहीं हैं परन्तु जीव के शरीर पंचभूतों से बनते हैं परन्तु अन्त में दोनों ही निनि० स्वरूप में समा जाते हैं। इन ससा० शरीरों में ही भेद हैं पर दोनों ही रहते नहीं, ईश्वर का काम पूरा हुआ तो चल दिये ऐसे ही प्रारब्ध पूरा होने पर जीव का शरीर भी नहीं रहता।	j
43	43 Mar + Apr	30				**४ कृपायें** शास्त्रों में बतायी गयी हैं - ईश्वरकृपा, वेदकृपा, गुरुकृपा और आत्मकृपा । इन ४ कृपाओं का संयोग हो जाये तो जीव संसार के बन्धनों से मुक्त हो जाता है। **चार खानि और ८४ लक्ष्य योनियों** - 'उद्भिज-२० लक्ष्य, स्वेदज-२० लक्ष्य, अण्डज-१० लक्ष्य, पिण्डज-३० लक्ष्य + ४ लक्ष्य वानर' **में जीव भ्रमण कर रहा है।** जहाँ मन जाये वहाँ जाने वाला वानर है तथा जो शास्त्र के अनुसार कर्म करता है वह नर है। मनुष्य का देह सर्वश्रेष्ठ है। **१. ईश्वरकृपा :-** भगवान ने करुणा करके मनुष्य को नर शरीर दे दिया है जिससे वह वेद शास्त्र पढ़ सके। नारायण को जानकर वह ८४ लाख योनियों से मुक्त हो जायेगा व नर से नारायण हो जायेगा। ये नर शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है।	
44	44 Mar + Apr	48				जीव के श्रेयसुख की प्राप्ति के लिये मैंने त्रिकाण्डमय वेद कहा हैं। नित्य-सुख को श्रेय एवं विषय सुख को प्रेय-सुख कहते हैं जो प्रतीति मात्र है। अभी भक्तियोग का प्रसंग चल रहा है जिसके अन्तर्गत् शबरी के निमित्त से भगवान राम नवधा-भक्ति का उपदेश कर रहे हैं नवधा भक्ति - **संतों का संग एवं भगवत् कथा में प्रेम :-** संतों से मेरी कथा सुनना व भगवान के निनि० व ससा० स्वरूप का निरूपण ही भगवत्-कथा है। हनुमानजी ने भगवान राम से सानुरोध प्रश्न किया कि - हे प्रभु ! 'त्वद्रूपं ज्ञातुमिच्छामि तत्त्वतः राम मुक्तये, अनायासेन् ये नाहं मुच्चेयं भव बन्धनात्, कृपया वद् में राम येन मुक्तो भवाम्यहं' , भगवन् शास्त्रों से मैंने ऐसा जाना है कि जो आपके निनि० स्वरूप को जान जाता है वह अनायास ही जन्म-मृत्यु के दुःख से छूट जाता है अतः आप हमें अपना निनि० स्वरूप बतायें जिससे हम जन्म-मृत्यु के दुःख से छूट जायें, ये मेरा व्यक्तिगत् ही नहीं अपितु सभी जीवों का सार्वजनिक प्रश्न है। 'हनुमानजी' जीव के व 'श्रीराम' भगवान के अवतार हैं। **'ज्ञान और वैराग्य'** भक्ति के पुत्र हैं। ज्ञान और वैराग्य मृत्यु को मार कर भगा देते हैं। भगवान का ज्ञान हो जाने पर ये संसार स्वप्नवत् भासता है और उन्हें संसार से वैराग्य हो जाता है अतः भक्ति भगवान के ज्ञान अथवा भगवत् प्राप्ति का साधन है। सीताजी द्वारा भग० **राम के निनि० स्वरूप का निरूपण** - 'रामं विद्धि परम् ब्रह्म...' - हे हनुमान ! श्रीराम का निनि० स्वरूप सच्चिदानंद परम् ब्रह्म है, वे प्रकृति से परे हैं इसलिये परम् तथा सबसे बड़े हैं इसलिये ब्रह्म हैं। वह सत्य-ज्ञान-आनंद से पूर्ण हैं इसलिये पुरुष कहलाते हैं। वे ही प्रकृति की पराकाष्ठा हैं यानि प्रकृति उस परम् पुरुष की छाया के समान है जो उस पुरुष से प्रकट होती है व संसार की प्रकट रूप से रचना करती है। पुरुष केवल सत्ता-स्फूर्ति देते हैं और काम सब प्रकृति करती है। जीवों क वे ही परम् गति हैं। वे अनंत अखंड सत्य-ज्ञान-आनंद के समुद्र हैं। भगवान कृष्ण ने जीव का भी यही स्वरूप बताया है। जीवात्मा का जन्म नहीं होता है। हमारा तुम्हारा आत्मा सच्चिदानंद स्वरूप है। भगवान और संत-महात्मा जीव को उसका स्वरूप ही बता देते हैं - **'ईश्वर अंश जीव अविनाशी, सत् चेतन घन आनंद राशि',** अविनाशी को ही सत् कहते हैं। भगवान कृष्ण ने परा और अपरा २ प्रकार की प्रकृति बतायी है। **अपरा प्रकृति** = भूमि जल अग्नि वायु आकाश मन बुद्धि अहंकार, ये ८ प्रकार की प्रकृति अष्टधा प्रकृति कहलाती है। इससे भिन्न **परा प्रकृति** = जीव रूपी प्रकृति है। सब शरीर अष्टधा प्रकृति से बनते हैं परन्तु वे मुर्दा के समान रहते हैं। जीव रूपी चेतन प्रकृति का जब इन शरीरों में प्रवेश होता है तब ये शरीर चलने-फिरने, बोलने आदि का व्यवहार करने लगते हैं। ये जीव रूपी प्रकृति ही शरीरों को धारण करता है। अर्जुन, ये दोनों प्रकृति ही संसार के भूत-प्राणियों की योनि अथवा कारण है और मैं इन दोनों का आधार-अधिष्ठान १०वाँ हूँ। जीव-चेतन प्रकृति तो मेरा ही प्रतिबिम्ब है, अष्टधा प्रकृति तो जड़ है। जीव सभी जड़ शरीरों में समाया है इसलिये वे जीवित हैं। मेरे आधार-अधिष्ठान में ही ये दोनों प्रकृति संसार की उत्पत्ति-स्थिति-प्रलय करती हैं अर्थात् मेरे ऊपर ही संसार की उत्पत्ति-स्थिति-प्रलय का खेल चलता रहता है भागवत् पुराण में १० वस्तुओं का वर्णन है **१** सर्ग = सृष्टि **२** विसर्ग = विशेष सृष्टि **३** स्थान = जिसके ऊपर संसार रहेगा **४** पोषण = संसार का पालन पोषण **५** ऊतया = कर्म की वासना **६** मन्वंतर = १४ मन्वंतरों की कथायें **७** ईश्वर की कथा **८** निरोध = प्रलय की कथा **९** मुक्ति = स्वरूप ज्ञान से जीव की जन्म-मरण से मुक्ति **१०** आश्रय = आधार-अधिष्ठान, उक्त ९ का जो आधार-अधिष्ठान तत्त्व है वह दसवाँ है। उक्त ९ से अलग दसवें को बताने के लिये महात्मा लोग वेद मंत्रों से अथवा उन मंत्रों के अर्थों से भगवत् तत्त्व को सरलता पूर्वक समझा देते हैं ।	k
45	45 Mar + Apr	28				हनुमानजी का भगवान राम से सानुरोध प्रश्न - 'त्वद्रूपं ज्ञातुमिच्छामि.....येन मुक्तो भवाम्यहं' - हे भगवन ! शास्त्रों में मैं आपके ससा० और निनि० दो स्वरूप सुनता हूँ, ससा० की तो मैं सेवा करता हूँ व नित्य-प्रति दर्शन भी करता हूँ पर आपके निनि० स्वरूप को मैं नहीं जानता। शास्त्र और संतों से ये भी सुनता हूँ कि आपके निनि० स्वरूप के ज्ञान मात्र से जीव सर्व दुःखों से व मृत्यु से भी मुक्त हो जाता है अर्थात् वह नित्य सुख-शान्ति और अमृतत्व को प्राप्त कर लेता है इसलिये जीव के अपने कल्याण के लिये आप अपना निनि० स्वरूप मुझे बतायें सीताजी द्वारा भगवान **राम के निनि० स्वरूप का निरूपण** - 'रामं विद्धि परम् ब्रह्म..' - हे हनुमान ! राम का निनि० स्वरूप सच्चिदानंद ब्रह्म है सर्वव्यापक हैं सबकी आत्मा हैं। जीवों का भी जो निनि० स्वरूप है वह साक्षात् भगवान राम ही है। वह सत् हैं क्योंकि उनका जन्म-मरण नहीं होता, अनंत-अखण्ड ज्ञान रूप हैं इसलिये वे चिद् है, आदि अनंत आनंद के सिन्धु हैं, आकाश के समान सर्वत्र व्यापक हैं तथा सभी विकारों से रहित व माया/प्रकृति से परे हैं। वे ऐसे निनि० स्वरूप सबकी आत्मा हैं। जीवों का भी स्वरूप भी राम का ही स्वरूप है। जीव और ईश्वर के निनि० स्वरूप में कोइ भेद नहीं है। जितने भी शरीर हैं उन सबकी रचना मैं करती हूँ। राम सब जीवों के हृदय में विराजमान हैं। जीव अपने सच्चिदानंद स्वरूप को न	

						जानने के कारण दुःखी रहते हैं। हम जीव भी ब्रह्म की भांति अकर्म और द्रष्टा-साक्षी है, हममें कोई कर्म नहीं हैं। सब शरीरों के भीतर बैठकर देखने वाला राम ही हैं। शरीर के भीतर रहने से वही जीवात्मा और बाहर परिपूर्ण होने से परमात्मा कहलाता है, राम का स्वरूप अखण्ड है मैं सीता माया हूँ, जगत की उ०-पा०-सं० मैं करती हूँ चाहे जीव के शरीर हों अथवा राम के, शरीरों का समूह ही संसार है। आना-जाना जन्म-मरण मेरे माया-राज्य 'दे०इ०म०बु०' में ही होता है, माया में ही कर्म है। राम का निनि० स्वरूप आकाश की तरह व्यापक, अचल और अकर्म है। हमारा तुम्हारा आत्मा भी नित्य व्यापक अचल और सनातन है। जीवात्मा स्त्री-पुरुष नहीं है, वह सबमें है व द्रष्टा-साक्षी मात्र है। सभी शरीर सीता हैं व जीवात्मा राम हैं। इस प्रकार सारा जगत सीताराम का ही स्वरूप है।	
46	46 Mar + Apr	37				नित्यसुख ही **श्रेयसुख** है और विषयानंद या **प्रेयसुख** तो श्रेयसुख का मन-बुद्धि में प्रतिबिम्ब है जो प्रतीति मात्र है **नवधा भक्ति** - १. संतों का संग - संतों के मुख से ही भगवान की कथा सुननी चाहिये क्योंकि संत ही भगवान के निनि० और ससा० स्वरूप को जानते और बताते हैं। भगवान का निनि० स्वरूप व्यापक-अग्नि की भाँति अव्यवहार्य है तथा प्रकट-अग्नि की भाँति सब व्यवहार ससा० स्वरूप में ही है। परन्तु सत्य की दृष्टि से निनि० अग्नि सत्य है एक है व्यापक है व सदा रहती है, इसके विपरीत ससा० प्रकट अग्नि सदा नहीं रहती, वह प्रकट होती है और काम पूरा होने पर निनि० अग्नि में समा जाती है। ऐसे ही व्यापक ब्रह्म सदा रहता है व उत्पन्न होने वाले सभी स्त्री-पुरुष, पशु-पक्षी आदि उत्पन्न होते हैं और मर जाते हैं २. भगवत् कथा में प्रेम ३. गुरु के चरण कमल की तन-मन-धन से सेवा करना ४. निश्छल एवं निष्कपट भाव से भगवान के गुणगान करना ५. भगवान के नाम का जप करना जिसके जप से सारे दुःख दूर हो जाते हैं। भगवान का नाम गुरु से लेने पर मंत्र बन जाता है क्योंकि गुरु उस मंत्र का अर्थ बताते हैं व अर्थ की भावना करने से अज्ञान का नाश होजाता है। भगवान में दृढ़ विश्वास रखना चाहिये कि भगवान अवश्य दर्शन देंगे और इस भव-बन्धन का नाश कर देंगे - ऐसा वेद में प्रकाशित हैं ६. सरल जीवन और शम दम सहित बहुत कर्म छोड़ कर केवल भगवान के ध्यान चिन्तन में लगा रहे ७. संपूर्ण चराचर जगत को मेरा ही रूप देखें - ये सातवीं भक्ति है। स्त्री-पुरुष पशु-पक्षी आदि सब भगवान की ही मूर्तियाँ हैं, जगत में मेरे अतिरिक्त अन्य कुछ भी न देखे। सभी इन्द्रिय-मन-बुद्धि-प्राण भगवान का ही विश्व-विराट स्वरूप है तथा संतों को मुझसे अधिक जानें क्योंकि मेरे निनि० एवं ससा० स्वरूप को संत ही बताते हैं। राम का सेवक ही राम का पता बता सकता है। राम सच्चिदानंद सिन्धु हैं व संत बादल हैं। भगवान हरि सर्व दुःखों को हरने वाले चन्दन हैं और संत चन्दन की सुगंध फैलाने वाली समीर/वायु हैं।	l
47	47 Mar + Apr	33				**नवधा भक्ति** **संतों का संग एवं भगवत् कथा में प्रेम :-** भगवान के स्वरूप का निरूपण ही भगवत् कथा है। शास्त्रों में भगवान के 'निनि० और ससा०' दो स्वरूप बताये हैं, **निनि०** तो आकाश के समान व्यापक साक्षी द्रष्टा है व राम कृष्ण नृसिंह आदि अवतार भगवान के **ससा०** स्वरूप हैं। ससा० स्वरूप से सबका काम बनता है, ससा० की भक्ति से भगवान प्रकट होते हैं और भक्त की इच्छा पूर्ण करते हैं। निनि० तो ज्ञान का विषय है तथा वह हमारी तुम्हारी आत्मा है 'देहो देवालय प्रोक्ता....सोहं भवेन पूजयेत्' - ये देह देवालय हैं, देव के निवास स्थान को देवालय या मन्दिर कहते हैं। भगवान ने देह को देवालय बताया है व देह में बैठकर देखने वाली जीवात्मा को देव बताया है। हमारा तुम्हारा स्वरूप जीवात्मा/देव है देह नहीं है। देह भगवान की माया से बनते बिगड़ते रहते हैं, इनका जन्म-मरण होता रहता है - 'कौमारं यौवनं जरा...' पर सब शरीरों में देखने वाला जीवात्मा मैं ही हूँ आकाश की भाँति कण-कण में व्यापक, अतः देह देवालय है और जीवात्मा/देव शिव है। हे अर्जुन ! 'मैं देह हूँ' इस अज्ञान का तुम त्याग करो तथा जो ब्रह्म है वह मैं हूँ इस भावना से भगवान का पूजन करो क्योंकि देव ही देखता है देवालय नहीं। भगवान ने सभी मन्दिर पंचभूतों से बना दिये और स्वयं हृदय-सिंहासन पर बैठकर देखने लगे हम लोग मन्दिर बनवाते हैं, उनमें पत्थर सोना चाँदी की मूर्ति बैठाते हैं और उनमें प्राण प्रतिष्ठा करते हैं परन्तु भगवान कहते हैं कि ये जो देह रूपी मन्दिर हैं इन्हें अपनी माया से स्वयं मैंने ही बनाया है व इस देह रूपी मन्दिर में हृदय रूपी सिंहासन पर मैं स्वयं ही विराजमान हूँ, प्राण-प्रतिष्ठा नहीं करना पड़ता -'ईश्वरः सर्व भूतानाम् हृद्देशे अर्जुन तिष्ठति, भ्रामयम् सर्व भूतानाम् यंत्रा रूढ़ानि मायया'/'सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो' - अर्जुन सबके हृदय में स्वयं मैं ही विराजमान हूँ, देखने वाले को ही देव कहते हैं। न शरीर देखता है और न इ०म०बु० व हृदय ही देखते हैं। अनंत कोटि ब्रह्माण्ड व उनमें शरीर-रूपी पिण्ड भगवान अपनी माया से क्षण मात्र में बना देते हैं और फिर सबके भीतर हृदय रूपी सिंहासन पर बैठकर स्वयं ही देखते हैं अतः ये देह मन्दिर हैं और उनमें बैठकर देखने वाले सच्चिदानंद भगवान ही हैं इस प्रकार 'मन्दिर और भगवान' दो ही तो हैं यानि हमारा शरीर और हम। भगवान कहते हैं कि जीवात्मा तो मैं ही हूँ तो हम-आप अलग से कहाँ रहे। मन्दिर भी भगवान ने बनाये व देखने वाले स्वयं भगवान ही हैं, आत्मा-रूप से सबकी आखों से भगवान ही देख रहे हैं तीसरा कोई है नहीं भगवान कहते हैं अर्जुन ! मैं परमात्मा ही आत्मा के रूप में सब भूतों के अन्तःकरण में स्थित हूँ और पंचमहाभूत व इनके कार्य ये 'देव दानव मानव पशु पक्षी' सारे शरीर मुझसे ही उत्पन्न होते, रहते व मुझमें ही लीन हो जाते हैं। इनका आदि मैं हूँ और अन्त भी मैं हूँ फिर मैं ही शेष रह जाता हूँ क्योंकि मैं सत्-चित्-आनंद स्वरूप ब्रह्म हूँ। अर्जुन ! अहं शब्द का अर्थ भगवान ही हुआ करता है शरीर नहीं क्योंकि शरीर को ज्ञान नहीं है और हम आप ज्ञानवान हैं। हम अपने शरीर को जानते हैं पर शरीर न स्वयं को जानता है और न दूसरे को जानता है इसीलिये सब एक स्वर से यही कहते हैं कि 'अहं पश्यामि' । 'नाम-रूप कुल-गोत्र जाति-वर्ण स्त्री-पुरुष बालक-वृद्ध' तो मन्दिरों के नाम हैं पर देखने वाला तो सबमें एक ही है क्योंकि शरीर तो देखते नहीं हम ही देखते हैं ऐसा हम सबको अनुभव है। ये संशय रहित ज्ञान सबको है कि मैं देखता ही हूँ। देखने वाला दिखाई नहीं पड़ता - **अदृष्टो द्रष्टा** - देखने वाला अदृष्ट ही रहता है। देवता एक है देवालय अनेक हैं - 'एको देवः सर्व भूतेषु गूढः .... साक्षी चेताः केवलो निर्गुणश्च' - एक ही देव है सभी देहों में जो दिखाई नहीं देता व शरीर देख सकते नहीं, वह स्वयं ही देखता है। देखने वाला दिखाई नहीं देता, जो दिखाई पड़ेगा वह दृश्य होगा, वह शरीर हो जायेगा। **देव और देवालय दो ही हैं** अतः हमारा स्वरूप देव है क्योंकि हम देखने वाले हैं, आकाश के समान वह सर्वत्र व्यापक है हर काल में कण-कण में अत- अपने को द्रष्टा-साक्षी जानो, इसी को ब्रह्म कहते हैं। स्वयं को देह न मानो, ये अज्ञान है। अहं ब्रह्मास्मि - 'अहं तत्व ब्रह्म है' - स्वयं को ब्रह्म जानो क्योंकि हम-तुम देखने वाले हैं इसमें संशय नहीं है व देह को मन्दिर जानो।	m
48	48 Mar + Apr	37				हनुमानजी का भगवान राम से सानुरोध प्रश्न - 'त्वद्रूपं ज्ञातुमिच्छामि.....येन मुक्तो भवाम्यहं' - हे भगवन ! शास्त्रों में मैं आपके ससा० और निनि० दो स्वरूप सुनता हूँ, ससा० की तो मैं सेवा करता हूँ व नित्य-प्रति दर्शन भी करता हूँ पर आपके निनि० स्वरूप को मैं नहीं जानता। शास्त्र और संतों से ये भी सुनता हूँ कि आपके निनि० स्वरूप के ज्ञान मात्र से जीव सर्व दुःखों से व मृत्यु से भी मुक्त हो जाता है अर्थात् वह नित्य सुख-शान्ति और अमृतत्व को प्राप्त कर लेता है इसलिये जीव के अपने कल्याण के लिये आप अपना निनि० स्वरूप मुझे बतावें सीताजी द्वारा भगवान **राम के निनि० स्वरूप का निरूपण** - 'रामं विद्धि परम् ब्रह्म..' राम का निनि० स्वरूप सच्चिदानंद ब्रह्म है, राम सभी उपाधियों से रहित, माया से परे, सर्वव्यापक, अविकारी व सभी जीवों की अपनी आत्मा हैं। ईश्वर और जीव के निनि० स्वरूप में कोई भेद नहीं है, ये अभेद दर्शन ही यथार्थ ज्ञान है। ईश्वर अथवा जीव के निनि० परमात्मा एकरूप है दोनों के ससा० शरीरों में ही भेद है प्रसंग से **सीताजी द्वारा निजी स्वरूप निरूपण** :- मैं सीता **'महामाया शक्ति'** हूँ मुझे ही **प्रकृति** कहते हैं। सारे जगत की उ०पा०सं० का काम मैं करती हूँ, राम तो निनि० अकर्म सत्ता मात्र हैं। ईश्वर (राम कृष्ण नृसिंह आदि अवतार) और जीव (स्त्री-पुरुष पशु-पक्षी वृक्ष-पर्वतादि) दोनों के शरीरों की रचना मैं करती हूँ - जगत जननी मैं हूँ, राम तो आकाश के समान व्यापक द्रष्टा साक्षी है। राम में कर्म नहीं हैं सभी कर्म मुझमें हैं। सारा संसार पंचभूतों से बनता है व अनंत कोटि ब्रह्माण्ड माया की रचना हैं जो मैं करती हूँ राम कुछ नहीं करते। चलना-फिरना सुनना-बोलना लेना-देना आदि सब कर्म इन्द्रियों में है राम में ये सब कुछ नहीं है - 'व्यापक ब्रह्म एक अविनाशी, सत् चेतन घन आनंद राशि' सहस्त्रमुख रावण की कथा अतः देह-इ०-म०-बु०-प्राण में ही कर्म हैं और ये सब सीता का रूप हैं, सब शरीरों के भीतर बैठकर देखने वाले राम हैं। दृश्य सीता और द्रष्टा राम हैं, **सारा जगत सीताराम का ही स्वरूप है** - ये रामायण का सार है।	
49	49 Mar + Apr	37				वेद 'कर्म-भक्ति-ज्ञान' त्रिकाण्डमय है :: भक्तियोग - नवधा भक्ति - ७. संपूर्ण चराचर जगत को मेरा ही रूप देखें व संतों को मुझसे अधिक जानें क्योंकि संत ही मेरा स्वरूप बताते हैं। राम का सेवक ही राम का पता बता सकता है। साध्य से साधन बड़ा होता है क्योंकि साधन से ही साध्य प्राप्त होता है। शरीरों के समूह को ही संसार कहते हैं तथा शरीर में नाम और रूप दो ही वस्तुऐं हैं। रूप जानने का साधन नाम ही है, बिना नाम के रूप का ज्ञान नहीं होगा। भगवान के निर्गुण और सगुण रूप को बताने के लिये नाम ही गवाही है, हथेली में आँवला रखा है पर नाम के बिना उसकी पहचान कैसे हो? ये नाम की महिमा है कि नाम के बिना रूप का ज्ञान नहीं होता, नाम के बिना स्त्री-पुरुष पशु-पक्षी वृक्ष-पर्वत अथवा भगवान की भी पहचान नहीं होती।	n

						जैसे रूप जानने का साधन नाम है वैसे ही संत भगवान को जानने के साधन हैं अतः साधु-ब्राहमण संत व गुरु के बताये बिना भगवान का भी ज्ञान नहीं होता चाहे भगवान सामने ही खड़े हों। गुरु ही बताते हैं कि ये शरीर मन्दिर हैं व इनमें बैठकर देखने वाला भगवान ही है। वेद शास्त्र गुरु आदि भगवान को जानने के साधन हैं। ब्रह्म-ज्ञान के लिये 'विवेक वैराग्य षट्क-संपदा व मुमुक्षुता' की ही भाँति संत और गुरु भी साधन हैं बिना साधन के साध्य की प्राप्ति नहीं होती।	
50	50 Mar + Apr	30				**४ कृपायें**	
51	51 Mar + Apr	39				भगवान कृष्ण कहते हैं कि संपूर्ण वेदों से मैं ही जानने योग्य हूँ व मुझे जानकर जीव जन्म-मृत्यु से छूट जाता है। वेद त्रिकाण्डमय है, चारों वेदों में एक लाख श्लोक हैं - ८० हज़ार कर्मकाण्ड, १६ हज़ार भक्तिकाण्ड व ४ हज़ार ज्ञानकाण्ड के। लोक शिक्षा हेतु मनुष्य का शरीर धारण कर भगवान राम वेद-विहित आचरण व कर्मयोग स्वयं करके बता रहे हैं। यहाँ भक्तियोग के प्रसंग में भगवान शबरी के माध्यम से नवधा भक्ति का उपदेश कर रहे हैं नवधा भक्ति - ७. संपूर्ण चराचर जगत को मेरा ही रूप देखें व संतों को मुझसे अधिक जानें क्योंकि संत ही मेरा निनि० एवं ससा० स्वरूप बता देते हैं, संत ही मेरे स्वरूप के जानने के साधन हैं साधन से ही साध्य की प्राप्ति होती है ८. आठँव जथा लाभ संतोषा - अपनी नीति-न्याय-मर्यादा की कमाई में ही संतुष्ट रहें क्योंकि मिलेगा उतना ही जितना भाग्य में लिखा है। अन्याय से लाया हुआ धन फलता नहीं है। थोड़ा या बहुत जो विधाता ने भाग्य पटल पर लिख दिया है उतना हमें मिलेगा अवश्य चाहे हम मरुस्थल भूमि में हों अथवा स्वर्ग के सुमेरु पर्वत पर, सपनेहु नहि देखहिं परदोषा - दूसरों के कभी दोष न देखो, दोष सदा अपने ही देखो व दोष बताने वाले को अपना हितैषी मित्र जानो। दूसरे के दोष देखने से द्वेष होता है जो स्वयं पाप है। सारा संसार माया के सत्-रज-तम् तीन गुणों से बना है अतः सभी में सत्व से **'गुण'** तथा रज-तम् से **'दोष'** दोनों ही रहेंगे, किसी में गुण अधिक होंगे व किसी में दोष। गुण-दोष दोनों को ही न देखना **उत्तम गुण** है क्योंकि गुण-दोष जिसमें होंगे उनका फल भी उसी का होगा। गुण-दोष देखने से अनायास ही राग और द्वेष होगा अतः दूसरों के शरीर रूपी मन्दिरों में केवल भगवान के दर्शन करो। गुण-दोष देखना अविवेक है क्योंकि वे मायाकृत है ९. निश्छल निष्कपट सरल व्यवहार व मुझमें दृढ़ विश्वास - सबसे निश्छल निष्कपट व्यवहार करो एवं मेरा पूरा विश्वास रखो। दुःख में दुःखी न हो और सुख-सम्पत्ति आने पर हर्षित न हो। भगवान सदा भक्त का कल्याण ही करते है। विपत्ति आने पर उसे भी भगवान की कृपा ही समझना चाहिये क्योंकि दुःख में संसार से हटकर मन केवल भगवान का ही स्मरण करता है और भगवान की याद आने पर उनका दर्शन होता है तो वह जन्म-मरण के दुःख से मुक्त हो जाता है अतः दुःख में घबड़ाना नहीं चाहिये।	o इति नवधा भक्ति
52	52 Mar + Apr	36				सृष्टि के आदि में भगवान ने सर्वप्रथम ब्रह्माजी को उत्पन्न किया और उन्हें शोक-मोह से युक्त देखकर **'ज्ञान'** का उपदेश दिया। वेद नाम ज्ञान का है और वही ज्ञान गुरु-परम्परा से हमें भी प्राप्त है व उस परम्परा का क्रम इस प्रकार है :- पुत्र परम्परा **भगवान नारायण** → ब्रह्मा → वशिष्ठ → शक्ति → पराशर → व्यास → शुकदेव गुरु परम्परा → गौड़पादाचार्य → गोविन्दपादाचार्य → शंकराचार्यजी से वह ज्ञान उनके मुख्य ४ शिष्यों को प्राप्त हुआ और परम्परागत् उनके अनेक शिष्य हुए। यद्यपि शंकराचार्यजी ने कर्म-उपासना-ज्ञान तीनों काण्ड की विवेचना की है परन्तु उनके भाष्य में ज्ञान की प्रधानता है। ज्ञान भी एक दीपक है जो हृदय के अन्धकार रूपी अज्ञान को ये ज्ञान रूपी दीपक हटा देता है। दीपक से दीपक जलाने से दीपक के प्रकाश में कोई कमी नहीं आती, इस प्रकार परम्परा से ये ज्ञान दीपक चला आ रहा है और आगे भी चलता रहेगा अतः जो ज्ञान भगवान नारायण ने ब्रह्माजी को दिया था आज भी हमें परम्परागत् वही ज्ञान प्राप्त हो रहा है। विद्यार्थी ही गुरु बनता है यही **गुरु-परम्परा** का क्रम है परम्परा से हमारे पिता भगवान नारायण हैं व ऐसे ही भगवान गुरुओं के भी गुरु हैं - **'कृष्णं वन्दे जगत गुरु'**, उन्हीं का ज्ञान अक्षर रूप से अब तक चला आ रहा है, क्षीर्ण नहीं हुआ अतः जो संत-महात्मा बताते हैं उसे पूरे विश्वास के साथ ग्रहण करना चाहिये। भगवान के उपदेश का सार **'गीता'** है सृष्टि के आदि में एक सच्चिदानंद ब्रह्म ही था , उस ब्रह्म से अथवा हमारी तुम्हारी आत्मा से (आत्मा ही ब्रह्म है व ब्रह्म ही आत्मा है) आकाश उत्पन्न हुआ, आकाश से → वायु, से → अग्नि, से → जल, से → पृथ्वी, से → औषधियाँ, से → अन्न, से → **पुरुष**: ।। दूसरी श्रुति भी कहती है कि सभी भूत-प्राणी अन्न से उत्पन्न होते है, अन्न को खाकर जीते हैं और फिर पृथ्वी में लीन हो जाते हैं अतः अन्न बहुत उत्पन्न करना चाहिये क्योंकि सभी भूत-प्राणी अन्न से ही उत्पन्न होते हैं। अर्जुन ! जिस क्रम से ये संसार उत्पन्न हुआ है समय आने पर ये सब पृथ्वी में लय हो जायेगा फिर पृथ्वी जल में → जल अग्नि में → अग्नि वायु में → वायु आकाश में → आकाश आत्मा में समा जायेगा, आत्मा और परमात्मा अभेद है अतः अन्त में एक आत्मा/परमात्मा/ब्रह्म ही शेष रह जायेगा । आत्मा की तो उत्पत्ति हुई नहीं उसका तो नाश भी कैसे होगा। मृत्यु तो उसे मारता है जिसका जन्म होता है अतः हमारा तुम्हारा **आत्मा** का स्वरूप **सत्-चित्-आनंद** है। शरीर उत्पन्न होते हैं इसलिये उनका नाश तो अवश्यम्भावी है। सत् का कभी अभाव नहीं व असत् का कभी भाव नहीं है। आत्मा तो अजर अमर अविनाशी नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वरूप ही है।	